# सिद्ध योग

योग सिद्धान्तों एवं शिक्षाओं का प्रतिपादक मासिक

संस्थापक

योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहनजी महाराज

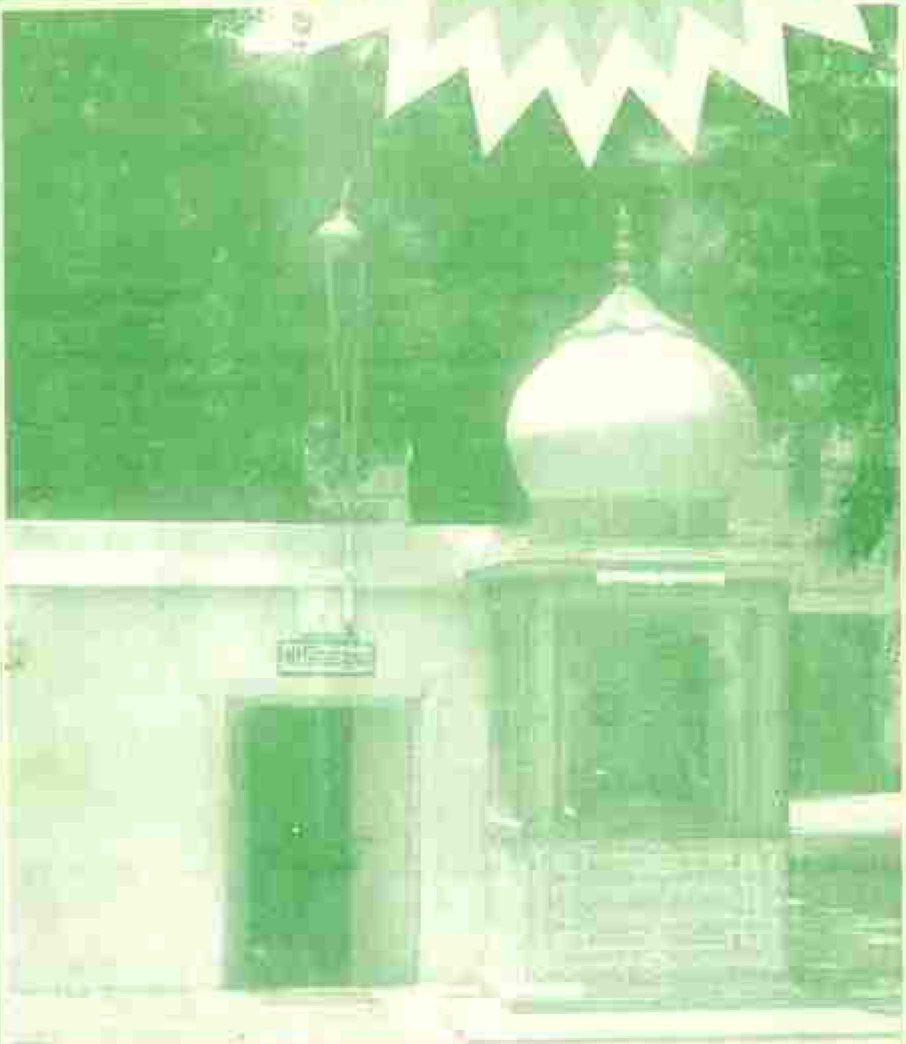

वर्ष : 37; अंक : 7
अक्टूबर 2004

श्री सिद्धगुफा प्रकाशन
सँवाई-283202 (आगरा) उ.प्र.

# SIDDHYOG
HINDI MONTHLY

संस्थापक :
योग-योगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहनजी महाराज

सम्पादक : आचार्य (डॉ.) दासलाल ब्रह्मचारी

संयुक्त सम्पादक : डॉ. विजय सिंह

प्रबन्ध सम्पादक : समस्त योग प्रचार मण्डलों के अध्यक्ष एवं गुरु भाई-बहिन


## इस अंक में...


- अमृत कण ........ 2
- आत्म समर्पण एवं उसका फल (विशेष लेख) ........ 3
- सम्पादकीय ........ 7
- हिमालय के अमर महायोगी – पूर्णचन्द्र पन्त ........ 10
- जीवनदान एक बार नहीं, अनेक बार – केशव देव उपाध्याय ........ 16
- रामकृष्ण परमहंस की अमृतवाणी – मूर्ति पूजा ........ 19
- सद्‌गुरु तत्व रूप तुम स्वामी – चरण चञ्चरीक–दिव्य ........ 22
- साधना-पथ-पाथेय – डा० विजय सिंह ........ 23
- प्रभु चरणों में समर्पित – राजेश कुमार सिंह ........ 26
- सत्संग और योग – जनक कुलश्रेष्ठ ........ 27
- भजन – मुकेश श्रीवास्तव ........ 31
- गुरु करते भव पार – डॉ० रुद्रदत्त चतुर्वेदी ........ 32
- श्री प्रभु रामलाल चालीसा – गया प्रसाद भारद्वाज ........ 35
- स्वास्थ्य चर्चा ........ 36
- गुरुदेव करुणासिन्धु – राजेश कुमार श्रीवास्तव ........ 39



| | |
|---|---|
| एक प्रति | : रु. 09-00 |
| वार्षिक शुल्क | : रु. 100-00 |
| द्विवार्षिक | : रु. 190-00 |
| आजीवन | : रु. 800-00 |

सद्गुरुदेव अनंतश्री चन्द्रमोहन जी महाराज

# सिद्धयोग

योग सिद्धान्तों का प्रतिपादक मासिक-पत्र

श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र, संवाई (एत्मादपुर) आगरा

वर्ष 37
अंक 7

अक्टूबर
2004


ध्यायं ध्यायं यदिह परमं ब्रह्म शुद्ध स्वभावम्,
मर्त्योमृत्योर्मुख वियस्तो, मुक्तिमाप्नोति सद्यः।
तत्प्राप्त्यर्थान् बहुतर विशदान् योगशास्त्रोपदेशान्,
कल्यानां भवतु महतां सिद्धये सिद्धयोगः।।

सशंखचक्रं सकिरीट कुण्डलं
सजीतवस्त्रं सरसीरुहेक्षणश्र्।
सहरवक्षः स्थलकौस्तुभ श्रियं
नमामि विष्णु शिरसा चतुर्भुजम्।।

शंख, चक्र, किरीट, कुण्डल, पीताम्बर, गले में हार, सीने पर कौस्तुभमणि धारण किए हुए भगवान विष्णु को मेरा नमन।

# अमृतकण

**अभिर्द्गात्राणि शुद्धयन्ति मनः सत्येन शुद्धयति।**
**विद्या तपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुद्धयति।।**

—मनुस्मृति

—शरीर की शुद्धि जल से होती है, मन सत्य से शुद्ध होता है, आत्मा की शुद्धि विद्या और तप से होती है तथा बुद्धि ज्ञान से शुद्ध होती है।

* * *

**यस्मान्नो द्विजते लोको लोकान्नो द्विजते च यः।**
**हर्षामर्ष भयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः।।**

—श्रीमद्भगवद् गीता

जिस व्यक्ति से किसी भी जीव को उद्वेग नही होता और जो स्वयं भी किसी जीव से उद्ववेग को प्राप्त नहीं होता तथा जो हर्ष, अमर्ष (ईर्ष्याजन्य सन्ताप), भय और उद्वेग रहित (शुद्ध मन वाला) है, वह भक्त मुझे प्रिय है।

* * *

**यस्तु विज्ञानवान्भवन्ति समनस्कः सदा शुचिः।**
**स तु तत्पद् माप्नोति यस्माद् भूयो न जायते।।**

——कठोपनिषद्

जो विज्ञान का ज्ञाता है जिसका आत्मा, मन के साथ नहीं बल्कि मन आत्मा के साथ लगा है। जिसका मन शुद्ध और पवित्र विचारों वाला है ऐसा जीवात्मा ही परम परमात्म पद को उपलब्ध हो सकता है, जिसके बाद फिर उस जीवात्मा का जन्म नहीं होता।

* * *

**नरो हिताहारविहार सेवी समीक्ष्यकारी विषयेष्वसक्तः।**
**दाता समः सत्यपरः क्षमावानाप्तो सेवी च भवत्य रोगः।।**

—चरक संहिता

हितकारी आहार—विहार का सेवन करने वाला, विचारपूर्वक कार्य करने वाला, काम—क्रोध—मोह आदि में आसक्ति न रखने वाला, दानी समदर्शी, सत्यनिष्ठ, सहनशील और आप्त पुरूषों की सेवा करने वाला व्यक्ति सदैव निरोग रहता है।

विशेष लेख

# आत्म समर्पण एवं उसका फल

योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज

अपने मन और बुद्धि को भगवान में लगाने के लिये हमें उनका ध्यान करना होता है। ध्यान के द्वारा हम अपने मन को उनके मन में लय कर देते हैं। छोटी शक्ति बड़ी शक्ति में लय हो जाया करती है। हमारी नासिका रन्ध्रों से निकलने वाले परमाणु भगवान् के अथवा अपने इष्ट के परमाणुओं के अन्दर मिल जाया करते हैं। जिस समय हमारे परमाणु अपने इष्ट के तेज के अन्दर लय हो जायेंगे तो हमारा मन अपना मन नहीं रहेगा उनका मन बन जायेगा। मन जब उनका बन जायेगा तो 'कृष्णत्व' आ जायेगा। यही है **मन्मनाभव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु'** मेरे में मन वाला बनो, मेरा ही भजन करो, मुझे ही नमस्कार करो। हे अर्जुन ! ऐसा करने पर तू मुझे ही प्राप्त हो जायेगा यह मैं प्रतिज्ञापूर्वक सत्य कहता हूँ क्योंकि तू मेरा बहुत प्यारा है। यह परम रहस्य की बात मैंने बताई। योग विज्ञान की बात भगवान ने समझाते हुये—**'सर्व धर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज'** की बात कही है। इस धर्म के पालन से यह पुण्य होगा, अमुक धर्म व अनुष्ठान से अमुक पुण्य होगा इस प्रकार के कर्मकाण्ड एवं कर्मजाल को छोड़कर तू मेरी शरण में आ जा। मैं तुझे सर्व पापों से व चिन्ताओं से मुक्त कर दूँगा, तू शोक मत कर। इस प्रकार से भगवान ने अर्जुन को आत्म—समर्पण करने की आज्ञा दी है। मैंने आत्म समर्पण का अर्थ पहले भी बताया था। भगवान के शब्दों में—

**यद्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्।**
**यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम्।।**

अर्थात् हे अर्जुन ! जो कुछ तुम कर्म करते हो, जो कुछ खाते हो जो कुछ हवन करते हो, जो दान करते हो, जो तपस्या करते हो वे सब मेरे अर्पण कर दो। हमारे प्राचीन सिद्धान्त के अन्दर व्यक्ति भगवान को भोग लगाकर भोजन करता है गीता में भी—

**ब्रह्मार्पणम् ब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम्'**

अर्थात् ब्रह्म को अर्पण करके ही हमें सब कुछ ग्रहण करना चाहिए। भोग लगा लेने पर हम मानते हैं कि भगवान तैजस आत्मा हैं और उन्होंने इसे स्वीकार कर लिया है इसे ग्रहण करके हम निष्पाप हो गये हैं **'यद्करोषि यदश्नासि'** कहकर के भगवान का भी यह संकेत है कि सब कुछ भगवान के अर्पण कर दो। गुरूदेव के चरण कमलों में जिनका आत्म समर्पण है उनके

चरणों में न्योछावर रहते हैं उनका यह समर्पण परा सत्ता का समर्पण है वह संसार में किसी भी प्रकार से रहे वह बिल्कुल निष्काम कर्मयोग को प्राप्त हो जायेगा। श्री प्रभुजी के चरणों से सम्बन्धित समर्पण के बहुत से उदाहरण मुझे याद आ रहे हैं। एक घटना मैं तुम्हें सुनाता हूँ।

नेपाल के जंगलों में रहते हुये एक बूढ़ा ब्राह्मण श्री प्रभु जी की खूब सेवा किया करता था। श्री प्रभु जी के साथ में हरिहरानन्द, दण्डी स्वामी तथा अन्य कई गुरु भाई रहते थे। ये लोग उस बूढ़े से ईर्ष्या किया करते थे। जो ज्यादा सेवा करता है। उससे और चिढ़ते हैं यह स्वाभाविक बात है। ईर्ष्या द्वेष चलते रहते हैं। उन्होंने विचार किया कि शीशगिर के पहाड़ पर ज्ञानगिर अघोरी रहता है। अघोरी निरामिष होते हैं मनुष्य को खा जाया करते हैं। हम इस बूढ़े को कन्द मूल लेने वहाँ भेज देंगे वहाँ अघोरी इनको यन्त्र पर चढ़ा देगा और खा जायेगा और हमें सेवा का मौका मिल जायेगा। इस भावना से वे उसे वहाँ भेजना चाहते थे। मनुष्य अपनी बुद्धि से सोच लेता है कि प्रभु जी को क्या पता चलेगा ? 'हम यह चालाकी करते हैं इससे हमें सेवा का मौका मिल जायेगा, प्रभु जी खुश हो जायेंगे और वरदान वगैरह दे देंगे'। किन्तु श्री प्रभु जी घट–घट के जानने वाले हैं। वे कहने लगे तुम लोग कन्दमूल कुछ ज्यादा लाया करो दण्डी स्वामी और अन्य कहने लगे प्रभु जी कन्द मूल तो शीशगिर में अधिक मिलते हैं। परन्तु वहाँ ज्ञानगिर अघोरी रहता है। हम लोग उधर कैसे जायेंगे ? वह बूढ़ा कहने लगा– प्रभुजी ! मैं जाऊँगा और वहीं पर से कन्द मूल लाऊँगा। प्रभु जी कहने लगे–नहीं बेटा। उधर मत जा तू और कहीं से ला। किन्तु बूढ़ा कहने लगा–नहीं प्रभु जी ! मैं वहीं से ले आऊँगा। बूढ़ा चला गया। वहाँ उसे वह अघोरी मिल गया। ज्ञानगिर उसको देखकर मन में सोचने लगा– पला पलाया शिकार है दो तीन दिन का भोजन तो हो ही जायेगा। ज्ञानगिर ऐसा सोचकर वृद्ध को यन्त्र में चढ़ाने ही वाले थे कि इतने में आकाशवाणी होती है–'ज्ञानगिर ! पला पलाया शिकार है तो तीन दिन का तो भोजन हो ही जायेगा। किन्तु आँख खोलकर हाथ लगाना, यह देख लेना यह है किसका'। ज्ञानगिर ने देखा–श्री प्रभु जी का अखण्ड मण्डलाकार तेज है और उनका वरदहस्त इनके सिर के ऊपर है। उसकी उसे खाने की हिम्मत नहीं हुई। अघोरियों का नियम होता है या तो वह आदमी को खा जाते हैं और यदि ऐसा न कर सके तो उसे वरदान देते हैं। अघोरी ने बूढ़े से कहा–कर्म तेरे बहुत ऊँचे हैं तेरे रक्षक तो सर्वशक्तिमान है। मार हम तुम्हें सकते नहीं, अब तू वर माँग। हमारा यही नियम होता है। तू बता क्या चाहता है ? बूढ़ा कहने लगा," तुम से क्या माँगूगा तू स्वयं मंगता है तू माँग मुझसे क्या चाहता है ? ज्ञानगिर को यह सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ। वह उसके शरीर से सिद्धियों के स्थानों को देखने लगा कि क्या कोई सिद्धि भी देने लायक इसके पास है ? उसने देखा सिद्धि तो नहीं है किन्तु फिर श्री प्रभु

जी के तेज की ओर देखा वे कह रहे हैं। बेटा ! इसके लिये मुख से जो भी कहेगा वही हो जायेगा। तू दण्ड देना चाहेगा। तो दण्ड मिल जायेगा, तू इसे योगी बनाना चाहेगा। तो यह योगी बन जायेगा, तेरे मुख से निकलते ही तत्काल वैसा ही हो जायेगा। इसके बाद ज्ञानगिर कहने लगा–तू कुछ भी नहीं मांगेगा तो भी मैंने तुझे वाक–सिद्धि दे दी। जिसके तू जो कुछ कहेगा, वही हो जायेगा, बूढ़े ने कहा–नहीं ! मुझे तेरी सिद्धि नहीं चाहिये किन्तु अघोरी कहने लगा। मैंने अपने नियम के अनुसार ही यह सिद्धि तुझे दी है। वह बूढ़ा लौटकर कन्द मूल लेकर श्री प्रभु जी के पास आ ही रहा था रास्ते में ही उसे गुरु भाई मिल गये। उस की बात सुनकर कहने लगे– चौरासी लाख खरीद लाया कि नहीं। तू किसी को वरदान देगा, किसी को शाप देगा, इस से तू अवश्य ही चौरासी के चक्कर में पड़ जायेगा। बूढ़ा बेचारा सरल था। कहने लगा' अच्छा ! ऐसा होगा ? पुण्य पाप के कारण मुझे चौरासी भोगना पड़ेगा। उसने कन्द मूल का गट्ठर उन्हें दे दिया और कहने लगा–भाई ! श्री प्रभुजी के चरणों में मेरी अन्तिम सेवा है। वाक्सिद्धि और संकल्पसिद्धि को खोने के लिये अब मैं जाता हूँ उन्हें खोकर दूसरा जन्म लेकर फिर प्रभु जी के चरणों में पहुँच जाऊँगा। बस ! यह मेरी अन्तिम सेवा प्रभु जी के चरणों में अर्पित कर देना गुरु भाई लोग ऊपरी मन से कहने लगे– अरे भाई ! तू क्यों जा रहा है ? कहीं मत जा। वे लोग श्री प्रभुजी के पास पहुँच गये। सारी बात प्रभुजी को बता दी। श्री प्रभु जी सोचने लगे–हमारा बच्चा इस तरह से मर जायेगा ! वह बूढ़ा वहाँ से चला गया और उसने अपनी वाक्सिद्धि को खोने के लिये पहाड़ की चोटी से गिरकर अपने शरीर को नष्ट कर देने का विचार कर लिया। पहाड़ की चोटी पर चढ़कर जब वह नीचे को गिरने ही वाला था तभी श्री प्रभु जी वहीं प्रकट हो गये और कहने लगे। तू अपने शरीर को क्यों नष्ट करना चाहता है ? वह कहने लगा ! प्रभु जी। वाक्सिद्धि व चौरासी के चक्कर को नष्ट करने के लिये ऐसा कर रहा हूँ। इससे मैं पुण्य पाप के चक्कर से बच जाऊँगा। श्री प्रभु जी कहने लगे–उसने सिद्धि दी हमने ले ली, हमने छीन ली। वह तेरे पास नहीं है। तेरे कहने से न किसी का बुरा होगा, न भला। चाहे किसी को कहकर देख ले। हम जो चाहेंगे वह होगा तेरे चाहने से कुछ नहीं होगा। श्री प्रभु जी उस पर प्रसन्न हो गये और कहने लगे–हमने तुझे पूर्ण भूत जयी योगी बना दिया। श्री प्रभु जी ने एक बार कृपा की और वह सिद्ध योगी बन गया। वह उस पहाड़ से फिर प्रभु जी के पास पहुँच गया। गुरु भाई सोचने लगे यह फिर आ गया। श्री प्रभु जी कहने लगे–अरे ! तुम लोग इसके लिये क्या सोच रहे हो ? यह तो सिद्ध हो गया है अब यह अमर हो गया है। वे कहने लगे–प्रभु जी ! इसकी वाक्सिद्धि। प्रभु जी कहने लगे, वह तो हमने छीन ली है। यह फल होता है आत्म–समर्पण का।

श्री प्रभु जी ने उसके समर्पण पर प्रसन्न होकर पूर्ण सिद्ध योगी बना दिया। वह भी शीशगिर की पहाड़ी पर समाधिस्थ है। भगवान ने अर्जुन को 'सर्वधमान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज' ऐसा कहकर आत्म समर्पण का ही संकेत किया है। धृतराष्ट्र ने संजय से एक दिन पूछा—संजय ! इस युद्ध में विजय किसकी होगी ? संजय ने कहा—

**यत्र योगेश्वरः कृष्णः यत्र पार्थो धनुर्धरः।**
**तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम।।**

जहाँ योगेश्वर श्री कृष्ण है। वहीं पर श्री, विभूति, नीति और विजय होती है। धृतराष्ट्र कहने लगे—कृष्ण चन्द्र होंगे किस की तरफ ? संजय सोचने लगे—यदि मैं कह दूँ कृष्ण पाण्डवों की तरफ होंगे तो यह रुष्ट हो जायेंगे इसलिये यह कहने लगा—महाराज ! यह तो मैं नहीं कर सकता कि कृष्ण किस तरफ होंगे किन्तु एक बात को मैं जानता हूँ कि कृष्ण कहाँ हुआ करते है। उन्होंने कहा—

**यतः सत्यम् यतो धर्मो यतः ह्रीरार्जवमृयतः।**
**ततो भवति गोविन्दो यतो कृष्णस्ततो जयः।।**

अर्थात् जहाँ सत्य होता है, जहाँ धर्म होता है, जहाँ लोक लज्जा होती है, जहाँ विनम्रता होती है वहीं गोविन्द होते हैं और जहाँ गोविन्द होते है वहाँ जय होती है। धृतराष्ट्र अपने मन में सोचने लगे कि मेरे पुत्रों में सत्य कहां ? झूठ ही झूठ है। मेरे पुत्रों में धर्म भी नहीं है। लाक्षागृह बनाकर पाण्डवों को जला देने का षडयन्त्र जैसा जघन्य अपराध करने वालों में धर्म कहाँ ? मेरे पुत्रों में लोकलाज भी नहीं है महलों की रानी द्रोपदी को भरी सभी ने निर्वस्त्र करने की कुटिल योजना बनाकर घसीटते हुये द्रोपदी का अपमान करने वालों में कहाँ लोकलाज है ? विनम्रता भी मेरे पुत्रों में बिल्कुल नहीं है। दूत बनकर आये भगवान श्री कृष्ण को ही बन्दी बनाकर जेल भेज देने की योजना बनाने वाले दुर्योधन में विनम्रता कहाँ है ? धृतराष्ट्र कहने लगे ये बातें तो पाण्डवों में ही है। संजय कहने लगा मैं नहीं कह सकता किन में ये बाते हैं ? इसका निर्णय आप स्वयं करें। अस्तु।

मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि आत्म समर्पण ही कल्याण का साधन है। इस समर्पण की भावना को पुष्ट करो। यह तब होती जब भीतर प्रकाश होगा। प्रेम आयेगा तब आत्म समर्पण होगा। इसलिये अपने जीवन को पूर्ण पवित्र बनाओ जिससे तुम्हारा योग ध्यान बढ़ता चला जाये। आत्म समर्पण के भाव को बढ़ाते चलो। तुम सब मेरे बच्चे हो, मेरी आत्मा के टुकड़े हो। अपने नियमानुवर्तिता के पक्के बनो। ध्यान की शक्ति पैदा करो।

* * *

# आनन्दकन्द गुरूदेव का प्राकट्य दिवस

आचार्य (डा०) दासलाल ब्रह्मचारी

करुणार्णव आनन्दकन्द सद्गुरूदेव श्री चन्द्रमोहन जी महाराज एक ऐसे सिद्ध योगी महापुरूष हैं जो युगों–युगों तक वन्दनीय रहेंगे। चन्द्रमा के समान शीतलता प्रदान करने वाले, त्रयताप हारी, भवभय विनाशी गुरूदेव जी योग का अमरपथ दिखाने के लिये कल्प–तरू बनकर आया करते हैं। स्थूल रूप को तिरोहित करने के बाद आज भी अपने संस्कारी–भक्तों का मार्गदर्शन, सहायता एवं रक्षा करते रहते हैं। अत्यन्त सरल, करूणा की मूर्ति, सम्पूर्ण योगविभूतियों से विभूषित आप सच्चे अर्थों में निष्काम कर्मयोगी थे। जो आप्तकाम होते हैं वही निष्काम कर्मयोगी कहलाने के अधिकारी होते हैं, अन्य नहीं। अध्यात्म एवं व्यवहार जगत का अद्भुत समन्वय आप के जीवन में देखा जा सकता है। अपने गुरूदेव योग योगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी महाराज ने इस कलिकाल में लुप्त योग विद्या रूपी वृक्ष का बीजारोपण किया था उसे आप ने ही पल्लवित एवं पुष्पित किया है। श्री प्रभु जी के योग को जन–जन तक पहुँचाने के संकल्प को आपने ही मूर्तरूप दिया है। श्री सिद्ध गुफा सिद्ध पीठ के संस्थापक के रूप में आपने योग जगत को अनुपम एवं अमूल्य धरोहर दी है।

पूर्णकाम तथा आप्तकाम होने पर भी सांसारिक लोगों की तरह निरन्तर कर्मरत रहकर अपने अनुयायियों को कर्म निरत रहकर साधना करने का उपदेश दिया है। उनकी वात्सल्य मूर्ति को देखकर प्राचीन कालीन ऋषियों की स्मृति हृदय पटल पर तैरने लगती है। इस संसार में शिष्य का कल्याण करने वाला गुरूदेव के समान तीनों लोकों में कोई नहीं है। शिष्य के पाश एवं बन्धनों को गुरूदेव ही काटते हैं। शिष्य के लिये गुरूदेव ही परमतत्व कहे गये हैं। इस सम्बन्ध में कबीरदास की वाणी है–

**सद्गुरु बड़े सराफ हैं परखे खरा और खोट, भवसागर ते काढि के,राखे अपनी ओट।**

भवसागर के पार करने वाले गुरूदेव ही हैं उन्हें भवरोग वैद्य तथा भवसागर के नौका के कर्णधार कहा जाता है। **माता से हरि सौ गुना, हरि से गुरु सौ बार** की उक्ति गुरु मार्गियों में प्रसिद्ध है। देश काल से अनावद्ध सद्गुरु स्वयं में एक युग होते हैं। उनके चिन्तन से पापी से पापी, अधम से अधम व्यक्ति भी परम पावन हो जाता है। गुरुमूर्ति जिस के हृदय में विराजती है वह दैवी सम्पदा का अधिकारी होता है और अधर्मों का तारनहार बन जाता है। गुरुगीता में

तो यहाँ तक कहा गया है कि एक सच्चे गुरु–उपासक के दर्शन मात्र से जीव भव–मुक्त हो जाता है। वेद में कहा गया है कि आचार्यवान ही परमात्मा को जान सकता है। गुरुदेव के मुख मे ब्रह्मस्थित है उनकी कृपा से वह प्राप्त हो जाता है। गुरुदेव अपने कर्म, व्यवहार एवं जीवन दर्शन से अपने अनुयायियों को निरन्तर सिखाते रहते हैं। अपने शिष्य में दिव्य गुणों का आधान करते रहते हैं। वस्तुतः गुरुदेव अपने शिष्य को अपने जैसा ही बनाना चाहते हैं। उनका हमेशा प्रयास रहता है कि शिष्य शुद्ध, मुक्त होकर अपने स्वरूप को पा जाये। दुनियाँ वाले आप से प्रेम करें अथवा आप दुनियाँ से प्रेम करें बहुत लाभ नहीं हुआ करता, किन्तु गुरू चरणों में प्रेम करने से मनुष्य सब प्रकार से कृतार्थ हो जाता है। गुरुभक्त को ब्रह्मज्ञान स्वयमेव हो जाता है संसार में भोग और मोक्ष दोनों को ही देने वाले गुरुदेव है। यदि मन में गुरु भक्ति नहीं है तो वह ज्ञान की ऊँची से ऊँची सीढ़ी पर पहुँचने पर भी मुक्ति नहीं पाया करता है। गुरू भक्ति से विमुख होने के कारण सिद्ध चारण–यक्ष किन्नर आदि माया–बन्धन में ही पड़े रहते हैं। योग की ऊँची–ऊँची सिद्धियों से युक्त भी यदि गुरू भक्ति विहीन है तो पतन को प्राप्त हो जाया करते हैं। संसार में अनेकों ऐसे उदाहरण मिलते हैं। गुरुदेव के हाथ में मुक्ति रहती है उनकी कृपा से ही वह मिला करती है। मानवाकृति में होते हुये भी गुरु–ब्रह्म होते हैं। महाराष्ट्र के प्रसिद्ध सन्त तुकाराम जी कहते हैं– यदि तुम्हें गुरू चरणों में श्रद्धा है, गुरु चरणों में गहरी भावना है यदि तुम गुरू की स्थिति को आत्मसात् कर सकते हो तो फिर तुम्हें प्रभु को ढूँढने की आवश्यकता नहीं, प्रभु तुम्हें ढूँढता फिरेगा। इसलिये गुरु चरणों का ध्यान साधक को सकल सिद्धियों को देने वाला होता है।

भारत में गुरुदेव के स्थापित अनेक आश्रमों में जहाँ से योग का प्रचार हो रहा है श्री सिद्ध गुफा सवाई धाम गुरुदेव का प्रधान आश्रम है। गुरुदेव का ९५ वाँ जन्मोत्सव देश के अनेक आश्रमों में २२ अक्तूबर को हर्षोल्लास के साथ मनाया जा रहा है। इस परम–पावन अवसर पर गुरुदेव के परम पावन चरणों में कोटि–कोटि प्रणाम है।

गुरु ध्यान करो, उन्हें अपने ध्यान में लाओ। ऐसा करने से तुम गुरु की महान स्थिति को प्राप्त कर लोगे"। इस प्रकार से बड़े–बड़े सन्त महापुरूषों को गुरु भक्ति से ही जीवन में प्रकाश, ज्ञान, यश ऐश्वर्य सब कुछ प्राप्त हुआ है।

सद्गुरु भगवान् का आविर्भाव सन् १९०६ में विजय दशहरा के पावन दिन हुआ था। एक छोटे से गाँव अलुपुर में जन्मे, पले इस बालक के विषय में कोई कल्पना नहीं कर सकता था कि आने वाले समय में एक महान् योगी के रूप में प्रसिद्ध होकर जग को प्रकाश देगा। ईशसत्ता सादगी पवित्रता, सत्यता एवं सच्चरित्रता में ही प्रतिष्ठित रहती है इसके लिये उपयुक्त वातावरण ग्राम्य जीवन में ही मिलता है। बड़े–बड़े महापुरूष गाँवों में ही जन्मा करते हैं। गुरुदेव के पिता श्री विप्रकुलतिलक पुण्य श्लोक पं० देवी राम जी हुये हैं। वे अपने समय के आर्य समाज

के बहुत अच्छे प्रचारक थे। प्रायः देश के दक्षिण प्रान्तों में ही वे आर्य सिद्धान्तों के प्रचार में लगे रहते थे। माता चरती देवी पौराणिक विचारों की परम आस्तिक देवी थी, जिन्हें गुरुदेव के बाल्यकालीन लीलाओं को देखने का सुखद सौभाग्य मिला। गुरुदेव को आनन्दकन्द महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज का चरण–सानिध्य मिला। उनके प्रकाश से जीवन में पूर्ण प्रकाश मिला और हजारों साधकों को तारने वाले बन गये। गुरुदेव भगवान् की सबसे बड़ी देन समाज को यह है कि इन्होंने घर गृहस्थी में रहने वाले लोगों को योग का वह अमरपथ दिया है जिनकी प्राप्ति के लिये साधु लोग वन–वन में विचरण करते हुये किसी योगी की कृपा से यह मार्ग प्राप्त करते हैं। ध्यानयोग का मार्ग ही मनुष्य का सब प्रकार से कल्याण करने में सक्षम है। आज गुरुदेव से योग दीक्षा प्राप्त सहस्त्रों साधक योग साधना में साधनारत होकर परम कल्याण पथ की ओर अग्रसर हैं।

❋ ❋ ❋

**'कुशलाकुशलानि कर्माणि'** अर्थात् अच्छे और बुरे भाव से की गई क्रियाओं को कर्म कहते हैं। इसी भाव से धर्म और अधर्म बनता है। इस प्रकार से निर्णय यह मिला कि हमारे शरीर और इन्द्रियों से होने वाली हर हरकत कर्म नहीं कहलाती है। अच्छे बुरे भाव रखकर जो हरकत की जायेगी वही कर्म बनेगा और उसी का फल भी मिलेगा कर्म फल भोग लेने के पश्चात् फिर वह संस्कार के रूप में रह जाते हैं पुनः वृत्ति के रूप में उदित होकर कर्म के रूप में बदल जाया करते हैं। इस प्रकार से संस्कार वृत्ति और कर्म का चक्र चलता रहता है इससे छूटना बहुत कठिन हो जाता है।

**–गुरुदेव श्री चन्द्रमोहन जी महाराज**

# हिमालय के अमर महायोगी

पूर्णचन्द्र पन्त

## अहंकारिणी योगिनी का मान मर्दन एवं शरणागति

प्रभु जी लगभग एक सप्ताह गोहाटी रहे। इस बीच उन्होंने वहाँ कई पुण्यात्मा लोगों को योगमार्ग में दीक्षित किया। वहाँ एक अन्य अवधूतानी रहती थी। वह ध्यानयोग में उच्च स्थिति प्राप्त नहीं कर पायी थी और वह बहुत अंहकारिणी थी। एक बार प्रभु जी के युवा शिष्य हरीहरानन्द जी ध्यान में बैठे हुए थे। उधर वह अवधूतानी भी अपनी कुटिया में ध्यानस्थ थी। उसने अपने मन में यह विचार किया कि यह युवक कोई ऊँची स्थिति वाला योगी है। अतः इसे अपने वश में करना चाहिये। उसने अपनी योगशक्ति से हरीहरानन्द जी को खींचने का प्रयत्न किया, किन्तु उन पर अवधूतानी की शक्ति का कोई प्रभाव नहीं पड़ा, उनके ध्यानाभ्यास में विक्षेप तो अवश्य हुआ और वे उसे हटाने का बार–बार प्रयत्न करते रहे। जब वह नहीं हटी तो उन्होंने उसका अहंकार चूर्ण करने के उद्देश्य से उसका पुतला (सूक्ष्म शरीर) खीचकर सामने खड़ा कर दिया। वह पुतला उनके आगे "क्षमा करो" "क्षमा करो" करके गिढ़गढ़ाने लगा। प्रभु जी ने सुना तो वे बोले– हरीहरानन्द यह क्या तमाशा हो रहा है ?

हरीहरानन्द ने कहा– प्रभो ? इसने मेरे ध्यान में बाधा डाली और मुझे खींचने का प्रयत्न किया था। अतः मैने परेशान होकर इसे ही खींचकर यहाँ खड़ा कर दिया है। अब आप आज्ञा दें कि इसे कहाँ रखूं ? प्रभु जी मुस्कराते हुए बोले– अच्छा ऐसी बात है तो इसे सामने खड़े बाँस के अन्दर डाल दो। हरीहरानन्द जी ने ऐसा ही किया।

तब बाँस के अन्दर से भी वही आवाज आनी शुरू हो गई– मुझसे भूल हो गई थी, अब क्षमा करो, क्षमा करो। प्रभु जी ने दया करके उसे मुक्त करा दिया। अवधूतानी को अपने किये पर बड़ा पश्चात्ताप हुआ। उसका अहंकार चूर–चूर हो गया। अगले दिन वह संकोच करती हुई बड़ी विनम्रता पूर्वक प्रभु जी के चरणारविन्दों में उपस्थित हो गई और दण्डवत् प्रणाम करके हाथ जोड़कर बोली–"प्रभो ! कल के अपराध के लिये मुझे क्षमा कीजिये। मैं अब आपकी शिष्या बनना चाहती हूँ। कृपा करके मुझे अपने चरणों में स्थान दीजिये।" प्रभु जी ने उसकी प्रार्थना स्वीकार करते हुए उसे कृपापूर्वक योग दीक्षा दे दी।

## नरभक्षी अघोरी से अपने भक्त की रक्षा

अगले दिन श्री प्रभु जी ने अपने सत्संगियों के साथ नेपाल देश की ओर प्रस्थान किया। आप लोग प्रायः सूर्योदय होते ही अपने गन्तव्य की ओर चल पड़ते थे और १२–१३ मील की दूरी तय कर लेने के बाद जहाँ भी उन्हें विश्राम के लिये सुविधा जनक कोई स्थान दिखाई देता वहीं वे अपनी यात्रा को विराम दे देते। वे वहीं वनों से कन्दमूल एकत्रित करके भोजन तैयार करते

थे। भोजनोपरान्त कुछ समय विश्राम करके सब लोग प्रभु जी के चारों ओर बैठकर उनसे योगचर्या एवं योगियों के चरित्र सुना करते थे। प्रभु जी के सान्निध्य में बैठकर उनकी अमृतमयी वाणी को सुनते हुए कई बार उन्हें समय का ज्ञान तक नहीं होता था तब प्रभु जी उन्हें सचेत करके स्वयं उठा देते थे। रात्रि को कुछ समय विश्राम करके प्रातः ब्रह्म मुहूर्त में उठकर नित्यकर्म, स्नान सन्ध्या वन्दन ध्यानाभ्यास आदि से निवृत्त होकर प्रभु संकीर्तन करते हुए वे पुनः अपनी यात्रा पर चल पड़ते थे। उस साधु मण्डली में कृष्णानन्द, मुखराम, हरीहरानन्द, दण्डी स्वामी एवं एक वृद्ध ब्राह्मण के अतिरिक्त कुछ अन्य लोग भी थे। वृद्ध ब्राह्मण प्रभु जी का परम भक्त था। वह हर समय प्रभु जी की सेवा में तत्पर रहता था, एक क्षण के लिये भी उनसे दूर नहीं होता था। कुछ लोग उससे चिढ़ते थे और आपस में कहते थे कि यह बूढ़ा हर बात में आगे रहता है, हमें कुछ भी सेवा नहीं करने देता। उन्होंने उसे प्रभुजी के चरणारविन्दों से दूर करने के कई प्रयास किये किन्तु उन्हे सफलता नहीं मिली। श्री प्रभु जी ने दण्डी स्वामी को बुलाकर कहा– देखो, हमारी टोली में जितने लोग हैं उस हिसाब से कन्दमूल कुछ कम आ रहा है। तुम्हारे कई भाई भूखे रह जाते होंगे। इसलिये तुम लोग कन्दमूल अधिक लाया करो।

दण्डी स्वामी हाथ जोड़कर बोला– प्रभो ! कन्दमूल तो शीशगिरि पहाड़ी पर ही अधिक मात्रा में मिलते हैं, किन्तु वहाँ ज्ञानगिरि अघोरी रहता है और वह नरभक्षी है। अतः वहाँ जाने का हमें साहस नहीं होता। यह सुनकर वह बूढ़ा कहने लगा– प्रभु जी मैं जाऊँगा। प्रभु जी बोले–नहीं बेटा ! उधर मत जा, कहीं और जगह से ले आ।

किन्तु वह बूढ़ा जिद्द करके वहीं चला गया। अघोरी ज्ञानगिरि ने उसे दूर से ही देख लिया और मन में प्रसन्न होकर सोचने लगा–पला–पलाया शिकार आ रहा है। इससे दो–तीन दिन का भोजन आराम से हो जायेगा। निकट पहुँचने पर ज्योंही उसने उसे पकड़ने की चेष्टा की तो उसे यह आकाशवाणी सुनाई दी–ज्ञानगिरि पला–पलाया शिकार तो मिल गया है पर इस पर हाथ डालने से पहले यह देख लेना कि यह किसका शिष्य है ? कहीं ऐसा न हो कि–तुझे खुद ही इसका शिकार बनना पड़े।

यह सुनकर अघोरी घबरा गया। उसने अपनी दिव्य दृष्टि से देखा कि–प्रभुजी का अखण्ड तेज उस वृद्ध के चारों ओर फैल रहा है और उनका वरद हस्त उसके सिर के ऊपर है। तब उसकी उसे मारने की हिम्मत नहीं हुई।

वह उस वृद्ध से बोला–ब्राह्मण देवता ! तुम्हारे कर्म बड़े ऊँचे हैं। तुम्हारे रक्षक तो स्वयं प्रभु हैं। अतः हम तुम्हें मार नहीं सकते। अब हम तुम्हें मारने के बदले तुम्हें कुछ देकर ही यहाँ से विदा करेंगे। क्योंकि हमारा नियम ही ऐसा है कि जो व्यक्ति हमारे हाथों मरने से बच जाता है उसे हम वरदान देकर लौटाते हैं। अब तू भी हमसे मन चाहा वर माँग ले।

**बूढ़ा बोला तुझसे मैं क्या मागूँगा। तू तो स्वयं मंगता है। तुझे जो कुछ चाहिये तू ही मुझसे**

माँग ले। यह सुनकर अघोरी को बड़ा आश्चर्य हुआ। वह उसके शरीर में सिद्धियों के स्थानों को देखने लगा कि क्या–क्या सिद्धियाँ इसके पास हैं ! तो वह क्या देखता है कि सिद्धि तो उसके पास कोई नहीं है किन्तु प्रभु जी का वरद हस्त उसके सिर के ऊपर है और वह कर रहे हैं–बेटा इसके लिये तू मुँह से जो भी कहेगा वैसा ही हो जायेगा। तू इसे दण्ड देना चाहेगा तो दण्ड मिल जायेगा, यदि योगी बनाना चाहेगा तो यह योगी बन जायेगा। तेरे मुँह से निकलते ही तत्काल वैसा ही हो जायेगा। यह देख अघोरी ज्ञानगिरि उस वृद्ध से बोला– ब्राह्मण देवता ! मैं जानता हूँ कि– तुम अपने मुँह से कुछ भी नहीं माँगोगे। अतः मैं बिना माँगे ही अपनी ओर से वाक्‌सिद्धि का वरदान देता हूँ। अब तुम जिसको जो कुछ कहोगे वही हो जायेगा।

बूढ़ा बोला– नहीं, मुझे तेरी सिद्धि नहीं चाहिये। अघोरी कहने लगा–अब तो मैं तुम्हें सिद्धि का वर दे चुका हूँ और अपने नियम के अनुसार ही तुझे यह सिद्धि दी है।

तब यह बूढ़ा वहाँ से लौट गया, वह कन्दमूल लेकर प्रभु जी के पास आ रहा था तो रास्ते में ही उसे वे गुरु भाई मिल गये जो उससे चिढ़ते थे।

बूढ़े से सारी घटना को सुनकर वे उसे भयभीत करते हुए बोले–सिद्धि का वरदान लेकर तू तो अपने लिये चौरासी लाख खरीद लाया है। अब तू किसी को वरदान देगा और किसी को शाप देगा। इससे अवश्य चौरासी लाख के चक्कर में पड़ जायेगा।

बूढ़ा सरल था। अतः वह उनकी बात पर विश्वास कर गया। उसने कन्दमूल का गट्ठर उन्हें देते हुए कहा–अब ये कन्दमूल आप लोग संभालो। प्रभु चरणों में मेरा अन्तिम प्रणाम कह देना वाक्‌सिद्धि का वरदान खोने के लिये मैं अब जाता हूँ। उसे खोकर दूसरा जन्म लेकर फिर प्रभु जी के चरणों में पहुँच जाऊँगा। मेरी यह अन्तिम सेवा प्रभु जी के चरणों में अर्पित कर देना।

वे लोग कहने लगे। अरे भाई ! तू कहीं मत जा, यहीं रह किन्तु वह माना नहीं और चला गया। तब वे लोग प्रभु जी के पास पहुँचे और सारी बात बता दी। प्रभु जी सोचने लगे–हमारा बच्चा इस तरह मर गया तो अनर्थ हो जायेगा। उधर बूढ़ा वहाँ से जाने के बाद पहाड़ की चोटी से गिरकर अपना शरीर नष्ट कर देने का निश्चय कर चुका था। ज्योंही वह पहाड़ की चोटी पर चढ़कर वहाँ से नीचे गिरने को तैयार हुआ तभी श्री प्रभु जी वहाँ प्रकट हो गये और बोले– बेटा ! तू इस तरह से अपना शरीर क्यों नष्ट करना चाहता है ? वह बोला प्रभु जी वाक्‌सिद्धि व चौरासी लाख के चक्कर को नष्ट करने के लिये मैं ऐसा कर रहा हूँ। इससे मैं पाप–पुण्य के झमेले से बच जाऊँगा।

प्रभु जी गम्भीर होकर बोले–अरे ! इतनी सी बात पर तुमने इतना बड़ा निर्णय ले लिया। अघोरी ने तुम्हें जो सिद्धि दी वह हमने उसी समय तुमसे छीन ली थी। वह सिद्धि अब तेरे पास नहीं है। तेरे कहने से न किसी का भला होगा और न बुरा। जो हम चाहेंगे वह होगा, तेरे चाहने से कुछ नहीं होगा। उस वृद्ध की सरलता, सेवा एवं समर्पण भाव को देखकर प्रभु जी उस पर

बड़े प्रसन्न हो गये और बोले–बेटा ! आज से तुम भूतजयी योगी बन गये हो। अब तुम सब प्रकार के द्वन्द्वों से मुक्त होकर समाधि का अखण्ड आनन्द प्राप्त करो। यह कहकर उन्होंने उसे शीशगिरि पहाड़ी पर समाधि में बैठा दिया।

## काठमाण्डू में पदार्पण तथा नेपाल नरेश द्वारा प्रभु जी का भव्य स्वागत

अगले दिन प्रातः नित्यकर्म, स्नान सन्ध्या वन्दन आदि से निवृत्त होकर आप लोग आगे की यात्रा पर चल पड़े। घोर वनों को पार करते हुए तथा हिंसक जन्तुओं का सामना करते हुए आप लोग दो तीन दिन में नेपाल देश की राजधानी काठमाण्डू पहुँच गये, वहाँ आपने एक धर्मशाला में डेरा लगाया। उन दिनों वहाँ के राजा का भाई किसी असाध्य रोग से ग्रस्त था। उसके इलाज के लिये दूर–दूर से अच्छे–अच्छे डाक्टर, नामी वैद्य और हकीम बुलाये जा चुके थे। उनके द्वारा सब प्रकार का इलाज किये जाने पर भी उसकी हालत में किसी प्रकार का सुधार नहीं हुआ। प्रभु जी के काठमाण्डू पहुँचने के दो दिन बाद ही पूरे नगर में इस बात का प्रचार हो गया कि अमुक धर्मशाला में कोई सिद्ध महात्मा ठहरे हुए हैं। कर्ण परम्परा से यह बात राज महल तक भी पहुँच गयी। राजा ने जब यह समाचार सुना तो उसने अपने एक मन्त्री को प्रभु जी के पास भेज दिया। मन्त्री ने वहाँ पहुँचकर प्रभुजी को प्रणाम किया और राजा के भाई की विषम रूग्णावस्था का समाचार बताकर आपसे महल में पधारने का निवेदन किया। प्रभु जी ने दयार्द्र होकर उसकी प्रार्थना को स्वीकार कर लिया और उसके साथ ही आप राजमहल में चले गये। राजा ने आपका बड़ा सम्मान किया और फिर आपको उस कमरे में ले जाया गया जहाँ रोगी विश्राम कर रहा था। प्रभु जी ने उन लोगों का मन रखने के लिए रोगी की कलाई पकड़कर उसकी नब्ज़ देखने का अभिनय किया और जेब से पुड़िया निकालकर उसके मुँह में उड़ेल दी। फिर उसके सिर पर हाथ रखकर अपने संकल्प से उसे उसी क्षण पूरी तरह से स्वस्थ कर दिया। यह चमत्कार देखकर सारा राजपरिवार बड़ा प्रभावित हुआ। राजा ने गदगद् हृदय से आपका आभार व्यक्त किया। उसने सभी सत्संगियों के सहित अगले दिन पुनः राजप्रासाद में आमन्त्रित करके आपका भव्य स्वागत किया। आपके सम्मान में दरबार का आयोजन किया गया तथा नगर में शोभा यात्रा निकाली गई। इस प्रकार नेपान नरेश ने बड़े सम्मान के साथ प्रभु जी को विदा किया।

## नेपालवासी सद्गुरूदेव भगवान सदाशिव से मिलन

प्रभु जी ने काठमाण्डू में चार–पाँच दिन विश्राम किया। इस बीच आपने वहाँ के प्रसिद्ध धार्मिक स्थलों के दर्शन भी कर लिये। तदनन्तर आपने मुखराम कृष्णानन्द तथा अन्य सभी भक्तों को उनके घरों को लौटा दिया और आपके पास जितना धन बचा था वह भी उन लोगों में बांट दिया। अब आपके पास केवल हरीहरानन्द जी रह गये थे। बाद में उन्हें भी शीशगिरि

पहाड़ी पर एक गुफा में ध्यान में बैठा दिया, जो अब भी उसी पहाड़ी पर समाधि में लीन रहा करते हैं। इस प्रकार अपने सभी सत्संगियों को विदा करके प्रभु जी एक ऊँचे पहाड़ पर चढ़ गये और वहाँ माता गुंजेश्वरी देवी के दर्शन करके उसी पहाड़ पर विचरण करते हुए कई मील आगे निकल गये। इतने में रात्रि हो गई तो आप हिंसक जन्तुओं से संकुल उस घोर वन में एक झाड़ी के नीचे सो गये। ठीक अर्धरात्रि को आपको गुरुदेव भगवान सदाशिव ने दर्शन दिये, आवाज देकर आपको जगाया और बोले–"अरे ब्राह्मण देवता तुम यहाँ छिपकर सोये हुए हो और हम तुम्हें लेने आये हैं। चलो हमारे साथ"। ऐसा कहकर वे प्रभु रामलाल जी को अपने साथ आकाश मार्ग से अपने लोक में ले गये। वहाँ पहुँचकर प्रभु जी को अपार आनन्द की अनुभूति हुई। वे बहुत देर तक अपने गुरुदेव के चरण कमलों से लिपटे रहे। फिर उठकर हजारों कामदेवों की शोभा को लजाने वाली उनकी मनोहारी छवि के बार बार दर्शन करते रहे।

उनका मुखमण्डल चन्द्रमा के समान मोहक और शान्त तथा सूर्य के समान परम तेजोमय था। गौरवर्ण का उनका सुन्दर शरीर घुटनों के नीचे पहुँची हुई जटायें तथा चेहरे पर घनी दाढ़ी और होठों के पास तक पहुँची हुई भौंहों के कारण और अधिक शोभायमान हो रहा था, उनकी कमर में व्याघ्राम्बर लिपटा हुआ था, गले में सफेद जनेऊ शोभा दे रहा था तथा वह हाथों में लम्बा त्रिशूल धारण किये हुए थे।

उन्होंने बड़े प्यार से प्रभु रामलाल जी को अपने पास बैठाया। उन्हें सिद्धलोक की महिमा बताते हुए यह समझा दिया कि उन्हें किस प्रकार वहाँ रहना होगा और क्या–क्या सावधानियाँ बरतनी होंगी। उन्होंने एक नरभक्षी पौधा दिखाकर कहा–इस पौधे से सदा बचकर रहना। यदि कोई इसे छूता है तो यह अपने पत्तों से उसे पकड़कर पत्तों को सिकोड़ लेता है और उसका सारा खून पी जाता है। इस प्रकार उसे राख का ढेर बनाकर ही छोड़ता है।

सदाशिव स्वरूप अपने गुरुदेव को पाकर प्रभु रामलाल जी आनन्द विभोर हो रहे थे। उन्हें ऐसा लग रहा था मानो उन्हें त्रिलोकी का राज्य मिल गया हो। वे दिन भर उनकी सेवा में उपस्थित रहते थे और उनका संकेत पाकर तदनुसार आचरण किया करते थे। एक बार रात्रि को वहाँ उनकी गुफा के बाहर धूने के पास एक भयंकर शेर आ गया। महाप्रभु सदाशिव ने अपना चिमटा पकड़ाते हुए उन्हें कहा– जाओ, इससे मारकर शेर को भगा दो। अपने गुरुदेव की आज्ञा को शिरोधार्य कर प्रभु रामलाल जी शेर की ओर बढ़े और उन्होंने शीघ्रता से उसकी पीठ पर चिमटे से प्रहार किया तो शेर कुत्ते की तरह चिल्लाता हुआ भाग गया, अगले रोज रात्रि को उसी समय एक भालू आ गया। उसे भी प्रभु जी ने अपने गुरुदेव का आदेश मिलते ही उन्हीं के चिमटे से भगा दिया। उससे अगले दिन भी रात्रि को पुनः एक शेर गुफा पर आ गया। अपने गुरुदेव का संकेत पाकर प्रभु रामलाल जी ने उसे भी भगा दिया। महाप्रभु सदाशिव जी अपने

युवा शिष्य रामलाल जी को अपने पास बैठाकर उन्हें तीन दिन तक योगोपदेश करते रहे। इसके बाद वे छः महिने के लिये समाधि पर बैठ गये। समाधि में बैठने से पूर्व उन्होंने प्रभु रामलाल जी से कहा—अब हम कुछ महिने समाधिस्थ रहेंगे इस बीच तुम अपना ध्यानाभ्यास करते रहना। उन्होंने बताया कि—इस विस्तृत पठार (वादी) में चार–चार, छः–छः मील की दूरी पर सैकड़ों वर्षों की आयु वाले तथा ऊँची–ऊँची स्थिति वाले अनेकों योगी अपनी–अपनी गुफाओं में बैठकर आत्म चिन्तन में लगे हुए हैं। यदि तुम्हारा मन न लगे तो कभी–कभी उन लोगों के पास जाकर सत्संग कर लिया करना। हिमालय का यह पवित्र क्षेत्र सिद्धों की तपोभूमि है, जो कि जन साधारण के लिये अदृश्य है। सिद्धकृपा के बिना कोई भी सांसारिक व्यक्ति यहाँ प्रवेश नहीं कर सकता। इतना कहकर योगेश्वर सदाशिव अपनी गुफा में पद्मासन लगाकर बैठ गये और कुछ क्षणों में ही उनकी समाधि लग गई।

❊ ❊ ❊

## शोक-संवेदना

यह सूचित करते हुये अत्यधिक दुःख हो रहा है कि आश्रम के पुराने साधक श्री लज्जाराम वाजपेयी का २७ अगस्त को देहावसान हो गया है। वे सन् १६८१–८२ में गुरु चरणों से जुड़े थे और अन्तिम समय तक सेवाकार्य में जुटे रहे। उन्होंने अपने घर कानपुर में देहत्याग किया। उनके पीछे उनके दो पुत्र एवं धर्मपत्नी हैं। इस दुःख की बेला में सिद्धयोग परिवार अपनी शोक वेदना प्रेषित करता है। गुरुदेव उन्हें चरणों में स्थान दें व आत्मशान्ति दें।

—संपादक

# जीवनदान एक बार नहीं, अनेक बार

**प्रेषक–केशव देव उपाध्याय, वाराणसी**

योग प्रशिक्षण केन्द्र श्री सिद्धगुफा सवाँई से सम्बन्धित हमारे प्रत्येक गुरुभाई–बहन झाँसी मण्डल के हमारे आदरणीय गुरुभाई श्री कृष्ण कान्त झा के नाम से अवश्य ही परिचित होगें। होली के समय छुट्टियों के दिनों में हमारे ये भाई जी अकेले, अपने पारिवारिक जनों या अन्य गुरुभाई–बहनों के साथ श्री सिद्धगुफा सवाँई पर आकर प्रभुजी का दर्शन और सत्संग लाभ प्राप्त किया करते थे।

घटना सन् अस्सी के दशक की है। ये तीन–चार गुरुभाई–बहनों के साथ होली के समय आये हुए थे। होली उत्सव के बाद एक दिन करीब अपराह्न चार बजे श्री गुरुदेव अपने गुरुभवन के सामने आराम कुर्सी पर सहजावस्था में विराजमान थे। बड़ा शान्त वातावरण था। आदरणीय भाई श्री कृष्णकान्त झाँ जी ने प्रभु जी के पैर दबाना शुरू किया। श्री गुरुदेव के चरण–कमल दबाते हुए उनके मन में एक भाव आया और उन्होनें प्रभु चरणों में निवेदन किया कि महाराज जी ! आपने हमें पाँच बार जीवनदान दिया है। श्री प्रभु जी ने उनकी बातों को सुनकर कहा कि अरे गोपाल ! (श्री प्रभु जी आदरणीय भाई कृष्णकान्त झाँ जी को अक्सर गोपाल नाम से ही सम्बोधित किया करते थे।) उस समय जब तुम बीज भण्डार का अन्नों से भरा बोरों का ट्रक लेकर गोरखपुर जा रहे थे और तुम्हारा ट्रक तीन बार गोलाई में घूम गया और भीषण दुर्घटना होने से एक फकीर ने बचाया था, वह कोई दूसरा था क्या ? यह घटना सुनकर आदरणीय भाई झाँ जी आश्चर्य में पड़ गये, क्यों कि इस घटना को घटित हुए करीब बीस साल हो चुके थें एवं इनके श्री चरणों में पहुँचने से कई वर्ष पहले की यह घटना थी। अब आइये उस घटना पर विचार किया जाय।

सन् साठ के दशक में ये अपने बिजनेस पार्टनर के साथ बोरियों में बीज–गोदाम का बीज दो ट्रकों में लादकर झाँसी से गोरखपुर लेकर जा रहे थे। करीब एक तिहाई दूरी तय करने के बाद ये लोग एक लाइन होटल (ढाबा) पर चाय–नाश्ता करने की नियत से रुके। इन लोगों की चाय बन रही थी, उसी समय एक सफेद वस्त्रधारी मुसलमान फकीर की तरह वहाँ आया और बोला कि बाबा भी चाय पीयेगा। बाबा की बात को सुनकर एक ड्राइवर ने कहा कि जा हट यहाँ से चला है चाय पीने। उस ड्राइवर की बात को बीच में ही काटकर श्री झाँ जी ने कहा कि ठीक है, बाबा जी बैठिये, आपको चाय पिलाते हैं और ड्राइवर से कहा कि तुम्हें बाबा को इस प्रकार नहीं कहना चाहिए था। इसके बाद श्री झाँ जी ने होटल वाले से कहा कि एक चाय और बढ़ा दो। होटल वाला जब चाय देने लगा, तब बाबा जी ने कहा कि मेरी चाय गिलास में मत दो, हमें कुल्हड़ में चाय दो। होटल वाले ने बाबा जी को चाय कुल्हड में दिया। जब सब लोग चाय पी चुके और चलने की तैयारी शुरू हुई, तब बाबा जी ने कहा कि बाबा भी ट्रक से चलेगा। श्री झाँ जी ने कहा कि बाबा जी ! ट्रक के केबिन में जगह नहीं है, आप ट्रक में लदे

बोरियों के ऊपर बैठ कर चलें। उनकी बात सुनकर बाबा ट्रक पर लदे बोरियों के ऊपर जाकर बैठ गया। दोनों ट्रकें दस पन्द्रह फीट की दूरी पर आगे–पीछे चल रही थीं।

अभी ट्रकें मुश्किल से आठ–दस मील गयी होंगी कि सड़क पर मोबिल ऑयल गिरने के कारण आगे वाली ट्रक, जिस पर बाबा जी तथा श्री कृष्णकान्त जी अपने पार्टनर के साथ बैठे थे, दाहिनी तरफ से घूमना शुरू की तथा सड़क पर गोलाई में उसने तीन चक्कर लगाये और मोबिल गिरे स्थान से आगे निकल गयी। ट्रक जब चक्कर लगा रही थी, तब सब लोगों को अपनी मृत्यु ही नजर आ रही थी तथा ट्रक के पहला चक्कर शुरू होने पर ही बाबा की जोर से आवाज तीन बार सुनायी दी ठहर, ठहर, ठहर ! अर्थात् रुक जाओ। बाबा की तीसरी बार की आवाज समाप्त होते ही ट्रक रुक गयी। पहली ट्रक की दशा देखकर, दूसरी ट्रक का ड्राइवर मोबिल वाले स्थान के पहले ही ब्रेक लगाकर अपनी गाड़ी रोक चुका था। पहली ट्रक रुकने के बाद बाबा ट्रक से नीचे उतरा और बाकी सब लोग भी नीचे उतर गये। उन्होंने भाई श्री झॉं जी को निमित्त बनाकर कहा कि बाबा अब सरकेगा अर्थात् जायेगा। श्री झॉं जी ने दो रूपये का नोट निकालकर बाबा को जब देने का प्रयास किया तो उन्होंने कहा कि यह पैसा हम क्या करेंगे ? हमें पैसा नहीं चाहिए। श्री झॉं जी ने हाथ जोड़कर प्रार्थना किया कि बाबा जी मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप इसे लेने की कृपा करें, तो इनके विनीत शब्दों को सुनकर बाबा जी ने कहा कि ला दे दे। इतना कहकर बाबा चलते बने। जहाँ यह घटना घटी थी, उस स्थान के आसपास कोई पेड़–पौधा या मकान नहीं था। ट्रक पर बैठने के बाद श्री झॉं जी के मन में यह भाव आया कि बाबा को जहाँ जाना है, वहाँ ट्रक से ही छोड़ दिया जाय। यह भाव आते ही वह नीचे उतर गये और बाबा को देखने लगे कि बाबा किस दिशा की तरफ जा रहा है। चूँकि आसपास पेड़–पौधे और मकान नहीं थे, अतः मीलों तक साफ दिखाई दे रहा था। आश्चर्य, महान आश्चर्य ! बाबा कहीं भी और किसी भी दिशा में दिखाई नहीं दिया। उस समय झॉं जी को ऐसा लगा कि यह फकीर केवल उन लोगों की प्राणरक्षा के लिए ही प्रकट हुए थे और फिर अन्तर्ध्यान हो गये।

## श्री गुरुदेव की अगाध करूणा और कृपा

अनाथ नाथ हमारे आप के गुरुदेव योगिराज श्री चन्द्रमोहन जी महाराज अपने यौगिक प्रवचनों में अपने मुखारबिन्दु से यह तथ्य कई बार समझा चुके हैं कि–"लल्ला ! योग वह अमर विद्या है जिसके जान जाने पर लौकिक एवं परलौकिक सभी का ज्ञान स्वतः ही हो जाता है।" **"यस्मिन ज्ञाते सर्व इदं ज्ञातं सः योगः"** अर्थात् जिसके जान लेने पर सब कुछ स्वतः जानकारी में आ जाये, वही योग है।

पशु, पक्षी, हिंसक अहिंसक, जानवर या संक्षेप में कहा जाय तो जड़ चेतन सबके मनोभावों को पूर्ण रूप से जान लेना सर्व समर्थ सिद्ध योगिराजों के ही बस की बात है। श्री योग साधन आश्रम ऋषिकेश में विराजमान रहते समय की एक घटना है। गंगा दशहरा का उत्सव बीते दस दिन हो गये थे। उत्सव में भाग लेने आये हमारे गुरुभाई बहन अपने घरों को पहुँच गये थे।

आश्रम पर मात्र एक दो गृहस्थी बचे थे एवं आराध्यदेव जी के साथ यात्रा करने वाले पार्षदगणों के अलावा ऋषिकेश आश्रम का प्रबन्ध देखने वाले ब्रह्मचारी गण ही उपस्थित थे। श्री गुरुदेव ने अपने एक लाडले शिष्य को कमण्डल साथ लेकर चलने को कहा। उनके साथ–साथ कुछ भाई भी चल दिये। माँ गंगा के किनारे जाकर श्री गुरुदेव ने कहा कि "तुम लोग यहीं रहो, मैं शौच करने जा रहा हूँ।" आगे–आगे श्री गुरुदेव एवं उनके पीछे सिर्फ एक भाई कमण्डल लेकर चल रहा था। मात्र सौ कदम के लगभग आगे चलने पर आराध्यदेव जी की धोती झाड़ी के काँटों में फँस गयी। आराध्यदेव जी ने छड़ी से उस झाड़ी को मारा एवं उनकी धोती झाड़ी से अलग हो गयी। इसके बाद श्री गुरुदेव आगे बढ़े एवं मात्र आठ दस कदम ही आगे बढ़े होंगे कि तेजी से लौटकर उस झाड़ी के पास आये एवं झाड़ी की उस टहनी को जिसे छडी से मारे थे, बाँये हाथ में लेकर अपने दाहिने कर कमल से सहलाते हुए कई बार प्रेम से पुचकारे। शायद जब उसे सांत्वना मिल गयी तब आगे की यात्रा आरम्भ किये। प्यार एवं स्नेह की ऐसी मिसाल (उदाहरण) अन्यत्र मिलना असम्भव ही है।

श्री गुरुदेव भगवान की अवतार स्थली श्री अलूपुर धाम जाने का सौभाग्य अभी कुछ वर्ष पहले मिला। वहाँ एक गुरुभाई से एक अलौकिक कृपा चरित्र सुनने को मिला जिसका यहाँ उल्लेख गुरुभाई बहनों की श्रद्धा वृद्धि करेगा, इस नीयत से लिखना आवश्यक है। सन् उन्नीस सौ साठ–इकसठ की घटना है। उन दिनों गुरुदेव जब अपनी अवतार स्थली पर रहते थे, तो साधना करने अपनी तपस्थली नहर पर प्रातः एवं सायं जाया करते थे। प्रातः काल की साधना समाप्त कर श्री गुरुदेव भगवान प्रातः करीब साढ़े दस बजे अपने निवास स्थान पर वापस आ रहे थे। झाड़ियों से निकलकर वह ज्योंही नहर के मुख्य रास्ते पर आये, एक कोबरा सर्प उनसे मात्र दो मीटर की दूरी पर अपना फन निकाले मुख्य सड़क के बीच में पड़ा था। श्री गुरुदेव उसे देखकर वहीं रुक गये। श्री गुरुदेव के रुकते ही उस कोबरा ने अपने फन को सिर समेत जमीन पर गिराकर प्रणाम किया। लगता था जैसे वह साष्टांग प्रणाम कर रहा हो। श्री गुरुदेव ने अपना दाहिना हाथ वरदमुद्रा में उठाकर उसे आशिर्वाद दिया एवं अपनी ओजस्वी वाणी में मधुर मुस्कान के साथ बोले–"लल्ला थोड़ा भुगतान अभी बाकी है, उसका भुगतान कर लो, घबराओ नहीं मुझे सदैव तुम्हारी याद रहती है, तुम्हारा भुगतान समाप्त होते ही तेरा काम बन जायेगा।" सर्प की आँखों से आँसू निकल रहा था एवं वह शान्त भाव से श्री प्रभु की वाणी सुन रहा था। तदनन्तर श्री गुरुदेव ने आदेश दिया–"लल्ला अब तुम झाड़ियों में अभी चले जाओ। यह रास्ता बहुत व्यस्त रहता है, यदि किसी की निगाह तुम पर पड़ गयी तो तुम्हें मार देगा एवं फिर सर्प योनि मे जन्म लेना पड़ेगा। कई जन्म का चक्कर बढ़ जायेगा।" उस विषैले कोबरा शिष्य ने सद्शिष्य की तरह श्री गुरुदेव को फिर अपना सिर जमीन पर रखकर प्रणाम किया एवं झाड़ियों में चला गया। श्री गुरुदेव अपना वरदहस्त उठाकर तब तक उसे आशिर्वाद देते रहे जब तक वह दिखायी देता रहा एवं फिर अपने घर आ गये।

❊ ❊ ❊

# रामकृष्ण परमहंस की अमृतवाणी

## मूर्ति पूजा

—मकान बाँधते समय चारों ओर मचान बनाना अनिवार्य होता है, परन्तु मकान का काम पूरा होते ही मचान की कोई जरूरत नहीं रह जाती। इसी तरह साधक के लिए प्रथम अवस्था में मूर्ति पूजा की आवश्यकता होती है, बाद में नहीं रह जाती।

—पहले बड़े अक्षर साफ–साफ लिखने का अभ्यास हो जाए तो फिर छोटी–सी घसीटी लिखावट आसनी से लिखी जा सकती है। इसी प्रकार पहले मन को साकार में स्थिर कर लेने के बाद सरलता से निराकार की धारणा हो सकती है।

—लक्ष्य बेधना सीखना हो तो पहले बड़ी वस्तुओं पर निशाना लगाना सीखा जाता है, इसके बाद में छोटी वस्तुओं पर भी आसानी से निशाना लगाया जा सकता है। इसी प्रकार, पहले यदि साकार मूर्तियों पर मन स्थिर किया जाए तो फिर बाद में निराकार पर भी मन सरलता से स्थिर किया जा सकता है।

—जिस प्रकार मिट्टी का शरीफा या हाथी देखने पर सचमुच के शरीफा या हाथी की याद आती है, उसी प्रकार ईश्वर की प्रतिमा देखने पर ईश्वर का ही स्मरण होती है।

—श्री रामकृष्ण (एक भक्त से) तुम मिट्टी की मूर्ति की पूजा की बात कह रहे थे। अगर मूर्ति मिट्टी की ही हो तो भी उस पूजा की आवश्यकता है। सब प्रकार की पूजाओं की व्यवस्था भगवान् ने ही की है। साधक के अधिकार के अनुसार भगवान् ने भिन्न–भिन्न अनुष्ठानों की व्यवस्था कर रखी है।

—जिस लड़के को जो भोजन रुचता और पचता है, माँ उसके लिए वही भोजन पकाती है। यदि माँ के पाँच बच्चे हों और घर में एक बड़ी मछली आए तो माँ उसमें से एक के लिए पुलाव बनाएगी, एक के लिए रसेदार सब्जी बनाएगी, तो एक को सूखी सब्जी बना देगी। जिसकी पाचनशक्ति जैसी हो, उसको उसी के अनुसार भोजन मिलता है। (इसी प्रकार विभिन्न साधकों के लिए विभिन्न प्रतीकों तथा अनुष्ठानों की व्यवस्था है।)

—शिष्य—अच्छा, मानो यह विश्वास हुआ कि ईश्वर साकार है। पर पूजी जाने वाली मिट्टी की मूर्ति तो वे हैं नहीं।

—श्री रामकृष्ण—मिट्टी की मूर्ति क्यों कहते हो ? वह चिन्मयी प्रतिमा है !

—श्रीरामकृष्ण ने एक बार केशवचन्द्र सेन से, जो कि उन दिनों मूर्तिपूजा के कट्टर विरोधी थे, कहा था "मूर्तियों को देखने पर तुम्हारे मन में भला मिट्टी, पत्थर या लकड़ी की बात क्यों उठती है ? तुम इनमें सच्चिदानन्दमयी माँ का आविर्भाव क्यों नहीं अनुभव करते ?"

—यदि मूर्तियों के बारे में चिन्मय–बोध रखकर पूजा की जाए, तो उनकी पूजा करते हुए पूजक को ईश्वरदर्शन तक हो जाता है, परन्तु जो मिट्टी या पत्थर समझकर मूर्ति की पूजा

करता है उसकी पूजा का कोई फल नहीं होता।

—यदि मूर्तिपूजा में कोई भूल हो तो क्या भगवान् नहीं जानते कि पूजा उन्हीं की हो रही है ? वे उस पूजा से अवश्य ही प्रसन्न होंगे। तुम उनकी भक्ति करो, उन पर प्रेम करो, बस।

—जब किसी को ईश्वर के दर्शन होते हैं तो वह मूर्ति आदि सभी में चैतन्य का प्रकाश का अनुभव करता है। उसकी दृष्टि में मूर्ति मिट्टी की नहीं रहती, वह तो चैतन्यमयी होती है।

## तीर्थयात्रा का महत्व

—गाय का दूध वास्तव में उसके समूचे शरीर में व्याप्त है, पर उसके कान या सींगों को दबाने से तुम्हें दूध नहीं मिलेगा, दूध के लिए तो थनों को ही निचोड़ना होगा। इसी भाँति, ईश्वर तो पूरे ब्रह्माण्ड में व्याप्त हैं पर तुम उन्हें हर जगह नहीं देख पाओगे। पावन तीर्थों और मन्दिरों में, जहाँ युग–युग के साधक–भक्तों के साधन–भजन, पूजा–उपासना आदि के फलस्वरूप भक्ति–भाव घनीभूत रूप में ओत–प्रोत है, भगवान् का विशेष प्रकाश विद्यमान है।

—यह निश्चित जानो कि जिस स्थान में अनेक युगों से अनेक लोग ईश्वर दर्शन के उद्देश्य से जप–तप, ध्यान–धारणा, प्रार्थना–उपासना आदि करते आए हैं, वहाँ भगवान् का विशेष प्रकाश है। उनकी भक्ति के कारण वहाँ ईश्वरीय भाव घनीभूत होकर विद्यमान है। इसीलिए ऐसे स्थान में मनुष्य को सहज ही में ईश्वरीय भाव का उद्दीपन तथा ईश्वर के दर्शन होते हैं। स्मरणातीत काल से असंख्य साधु, भक्त तथा सिद्ध पुरुष इन तीर्थक्षेत्रों में ईश्वरदर्शन के लिए आते रहे हैं तथा अन्य सभी वासनाओं को छोड़ उन्होंने यहाँ प्राणों की व्याकुलता से ईश्वर को पुकारा है इसी कारण, ईश्वर के सर्वत्र समान रूप से विराजमान होते हुए भी इन स्थानों में उनका विशेष प्रकाश होता है। जैसे, जमीन को खोदने पर सभी जगह पानी मिल सकता है, परन्तु जहाँ कुआँ, तालाब या झील हो वहाँ पानी के लिए जमीन खोदना नहीं पड़ता—जब चाहो तब तुरन्त पानी मिल सकता है।

—जिस प्रकार भरपेट चारा खा चुकने के बाद गाय निश्चिन्त होकर एक जगह बैठकर खाया हुआ उगलकर अच्छी तरह चबाती हुई जुगाली करती रहती है, उसी प्रकार, देवस्थान, तीर्थक्षेत्र आदि का दर्शन कर आने के पश्चात् उन स्थानों में मन में जो पवित्र भगवद्–भाव उदित हुए थे उनके विषय में एकान्त में बैठकर चिन्तन–मनन करना चाहिए, उन्हीं में डूब जाना चाहिए। दर्शन करके वापस आते ही मन से सब कुछ निकाल बाहर कर, मन को रूप–रसादि विषयों में नहीं लगाना चाहिए। ऐसा करने से उन भगवद्–भावों का मन पर स्थायी परिणाम नहीं हो पाता।

—दुनिया में चारों कोने घूम आओ, कहीं कुछ नहीं मिलेगा। जो यहाँ (अपने हृदय में) है, वहीं वहाँ भी है।

—जब श्रीरामकृष्णदेव इहलोक में विद्यमान थे, उस समय बीच–बीच में उनके कुछ शिष्य

उनके निकट अपनी तीर्थ–भ्रमण की इच्छा प्रकट किया करते। इस पर श्रीरामकृष्ण कहा करते–"जिसके यहाँ (श्रीरामकृष्ण में या अपने हृदय में) है, उसके वहाँ (तीर्थस्थानों में) भी है, पर जिसके यहाँ नहीं है, उसके वहाँ भी नहीं है।" अथवा 'जिसके अन्तःकरण में भक्तिभाव है, तीर्थस्थानों में उसका वह भाव और भी अधिक वर्धित होता है। परन्तु जिसके हृदय में वह भाव ही नहीं है, उसका वहाँ जाकर भी भला विशेष क्या होने वाला है ? कई बार हमारे सुनने में आता है कि अमुक का बेटा काशी या अन्य किसी तीर्थक्षेत्र में चला गया है। पर कुछ ही दिनों में फिर सुनाई देता है कि उसने वहाँ काफी दौड़–धूप करके एक नौकरी जुटा ली है और घरवालों को चिट्ठी लिखी है, पैसा भी भेजा है। तीर्थक्षेत्र में वास करने जाकर कितने ही लोग वहाँ दुकान खोलकर व्यापार–धन्धा करने बैठ जाते हैं। मथुरानाथ के साथ पश्चिम के तीर्थों में जाकर मैंने देखा, वहाँ भी वही आम के पेड़, इमली के पेड़, वही बाँस की झाड़ियाँ–जैसे यहाँ, वैसे ही वहाँ भी। देखकर मैंने हृदय से कहा, अरे हृदू, फिर हम लोग यहाँ क्या देखने आए ? वहाँ जो है, यहाँ भी वही है। सिर्फ मैदानों में पड़ी विष्ठा देखने पर मालूम होता है कि यहाँ के लोगों की पाचनशक्ति वहाँ के लोगों से अधिक है।"

❋ ❋ ❋

निर्गुणस्य हतं रूपं दुःशीलस्य हतं कुलम्।
असिद्धस्य हता विद्या अभोगेन हतं धनम्।।

*–चाणक्य*

गुणहीन व्यक्ति की सुन्दरता व्यर्थ होती है, शीलरहित व्यक्ति के कारण कुल की निन्दा होती है। अलौकिक शक्ति एवं सिद्धि प्राप्त किये बिना विद्या व्यर्थ होती है और धन का उपयोग न करने पर धन भी व्यर्थ हो जाता है।

# सद्गुरु तत्व रूप तुम स्वामी

## चरण चञ्चरीक–दिव्य

(देवी प्रसाद शर्मा)

जन्म दिवस गुरुदेव आपका
पुण्य पर्व ले आया
इसीलिए जन जन के मन में
प्रेम उमड़कर छाया।।

❋

बड़े पुण्य से बड़े भाग्य से
आई है ये बेला,
ओत प्रोत खुशियों से मुखरित
है भक्तों का मेला।।

❋

यदा कदा ही जन्म धरा पर
सिद्धेश्वर है आते,
कभी राम शुकदेव श्याम बन
मोहन है आ जाते।।

❋

सिद्धयोग के दिग्दर्शक तुम
उपकारक जन जन के
हो आधार निराधारी के
सम्बल बल हीनन के।।

❋

श्री सिद्धगुफा की पुण्य भूमि में
देते हो प्रभु का उपदेश
डूबी हुई योग नौका के
बन खिवैया तुम योगेश।।

❋

श्रद्धा भरे हृदय से जिसने
कुटी तुम्हारी खोली,
आशुतोष हो औढ़र दानी
भर दी सबकी झोली।।

सद्गुरु तत्व रूप तुम स्वामी
तेज अखण्ड प्रचण्ड महान
निहित आप में सकल भुवन के
परम सनातन ज्ञान विज्ञान।।

❋

अखण्ड धैर्य साहस बल के
प्रखर सौम्यता के अगार,
मुक्त हस्त से छिपे–छिपे तुम
करते लाखों का उपकार।।

❋

साधक कोई भटक न जाये
इस तमसावृत जग में,
इसीलिए तुम ज्योति जलाकर
आ बैठे हर मन में।।

❋

नर होकर भी नारायण हो
महिमा अगम अगोचर,
मोहन नाम रूप ले आये
हुए सभी को गोचर

❋

कृपा दृष्टि से अपनी तुमने
अनगिन अधम उबारे
परम भक्त वत्सल बन सबके
बिगड़े काज संवारे।।

❋

कौन तुम्हारे ऐसे ऋण से
उऋण हो पायेगा,
नित्य प्रति चरणों में चित दे
तेरी महिमा गायेगा।।

# साधना-पथ-पाथेय

डा० विजय सिंह

ध्यान, समाधि, सिद्धि की बड़ी-बड़ी विलक्षणीय शक्तियों, आनन्दातिरेक, भावातिरेक की मस्ती आदि बातों को सुन-पढ़कर हम संसारियों का मन प्रलोभन में पड़ जाता है। चाहने लगता है काश ! यह सब हमारे साथ भी घट सकता। मत भूलिये ! मृत्युन्जय वही होता है जो नचिकेता की तरह मृत्युराज को सद्यः साक्षात्कार करने का सामर्थ रखता हो। सद्‌गुरु प्रदत्त साधना में संस्कारों का प्रत्यक्षीकरण सदैव सुखकारक ही नहीं होता है। परन्तु जो कुछ होता है वह साधना के प्रगति की ओर ही घटित होता है। यह सब पशु के पशुपति होने की सम्भावना में व्यक्तित्व के परिष्करण हेतु सद्‌गुरु के इच्छा विशेष से घटित होता है। कबीर वाणी-

**गुरु कुम्हार शिष्य कुम्भ गढ़ि गढ़ि काढ़े खोट।**
**अंतर हाथ सम्भारि के बाहर वाहै चोट।।**

सद्‌गुरु हम सभी के साधना-पथ को उजागर करता है। स्वामी मुक्तानन्द जी "मेरे साधनाकाल की अनुभूतियाँ" में लिखते हैं-

"सिद्धमार्ग का योगी इस बात को पूर्णतया याद रखे कि अन्तरहृदय की चिति (कुण्डलि शक्ति) प्रेरित ज्योति में समय-समय पर ऊँच-नीच, अच्छा-बुरा, ग्राह्य-त्याज दर्शनीय-अदर्शनं मंगलप्रद-अमंगलकारक जो भी दीखे वह पूर्णतया चिति ही है। "एक बार श्रीगुरुकृपा हो गे कि तदन्तर तुम्हें कोई भय नहीं करना चाहिये। मात्र एक बात पूर्ण याद रखो कि सिद्धयोग गुरुआज्ञा का पूरा-पूरा पालन करना चाहिये। **'गुरुवाक्यमेव केवलम्'** यह महत्व का अपनी समझ में रखना चाहिये।

स्वामी जी ने मृत्यु भय के संदर्भ में अपने अनुभव का जो वर्णन किया है उन्हें साधक

"एक दिन ध्यान करते-करते ऐसी एक स्थिति आई जिसमें मेरी आँखे ऊपर की ओर चढ़ गयीं। दोनों नेत्र बिन्दु ऊर्ध्व सहस्त्रार के मध्य, नील बिन्दु में आकर्षित हो गई। सहस्त्रार में अव्यक्त तेज का मण्डल है। उस दिन मण्डल खुल गया और खुलते ही एक दो हजार नहीं, बल्कि कोटि सूर्यो का तेज वहाँ फैल गया। वह तेज इतना प्रखर था कि उसको सहन करना मेरी शक्ति के बाहर था। मेरा धैर्य टूट गया। अब ध्यान भंग करना मेरे अधीन नहीं रहा। आसन से भी स्वयं नहीं उठ सकता था, आसन भी पराधीन था। उस तेज ने मुझे अपनी ओर खींच लिया। तेज को देखते-देखते मैं मूर्छित हो गया। फिर जरा होश में आने पर 'हे भगवती, हे सदगुरुनाथ बचाओ। कहकर पुकारने लगा, क्योंकि मुझे मृत्यु का भय लगता था। प्राण एवं मन की गति रुक गयी। मैं अनुभव करने लगा कि मेरा प्राण निकल रहा है। हे सदगुरु, हे भगवान ! ऐसा कहते-कहते शरीर पर से मेरा अधिकार छूट गया। जैसे मनुष्य मरते समय मुँह खोलकर और हाथ फैलाकर एक अजीब ध्वनि करता है, वैसा ही ध्वनि करता हुआ मैं गिर पड़ा।

गिरते ही एक क्षण में मेरा मूत्र निकल गया. इससे मैंने समझा कि मेरी स्मृति पूर्णरूप से नष्ट हो गयी है।

उस अनजानी मूर्च्छा में कुछ समय पड़ा रहा। घण्टे डेढ़ घण्टे बाद मैं उठा और हँसा कि अभी तो मर गया था। फिर से जिन्दा हो गया हूँ। बड़ी शांति से, प्रेम से, आनन्द से उठा। मैं समझा कि कोटि सूर्य के समान उस दिव्य तेज के दर्शन में ही मुझे मृत्यु की अनुभूति हुई थी। मैं बहुत डर गया था। "मौत क्या है" यह मैं समझा। इस अनुभव के बाद अब भय का मुझे ज्ञान नहीं। मेरा भय का स्थान ही नष्ट हो गया। किसी का डर नहीं। मुझे पूर्ण निर्भयता प्राप्त हुई।

आदरणीय भाई श्री आत्माप्रसाद जी (वाराणसी) ने बताया था कि श्री गुरुदेव भगवान का योग प्रचार कार्यक्रम उन दिनों वाराणसी में उनके निवास पर हुआ करता था। एक बार श्री गुरुदेव भगवान उनके ऊपर के कक्ष में स्थापित "प्रभु मंदिर" में गये, वहाँ अनेक आध्यात्म सम्बन्धी ग्रंथों को देखा। श्री गुरुदेव जी आत्माप्रसाद जी से बोले—लल्ला ! इन पुस्तकों को मैं लेता जाऊँ तुम्हें दुःख तो नहीं होगा। भाई श्री आत्माप्रसाद जी ने अति विनम्रता से कहा—प्रभु ! सब आपका ही है, ये पुस्तकें आपको सहर्ष समर्पित हैं। उन पुस्तकों के ढेर को ट्रंक में रखकर श्री प्रभुजी आश्रम ले गये। श्री चरणों में एक लम्बे समय का सानिध्य रहा कदाचित ही कभी श्री गुरुदेव को ग्रंथ अध्ययन, अखबार वाचन करते देखा होऊँगा। भाई श्री आत्माप्रसाद जी के कथन का मन्तव्य मेरे मन में उठा कि साधक को पुस्तक—ज्ञान, शुष्क ज्ञान—मात्र से बचना चाहिये। उसकी जगह अर्न्तजगत को प्रकट करने वाली क्रिया (श्वास—प्रश्वास जाप) ही अति प्रधान है। क्योंकि इससे ही यथार्थ ज्ञान—भक्ति का विकास अपने—आप होता रहता है।

सद्गुरु कृपा अनवरत सब पर समान बरस रही है। कृपा अत्यन्त पवित्र गूढ़ है। उसे पात्रता के बिना कोई धारण नहीं कर सकता। इसलिये गुरुप्रदत्त मंत्र एवं साधना द्वारा ही सुविवेक और शक्ति धारण की क्षमता विकसित होती है।

अतः हमें गुरु आज्ञा का पालन करना होगा वे कृपालु अपने—आप ही सम्भाल करेंगे। महापुरुषों का कथन है। नियमानुवर्तिता से नित्य जप—यज्ञ सम्पादित करते चलो उससे दिव्य—दर्शन, नाद, ज्योति, आदि अदभुत् अनुभव स्वयमेव घटित होगा। यह सब संस्कार भिन्नता से विभिन्न लोगों को भिन्न—भिन्न अनुभव होगें। इन सब अनुभवों के प्रति सचेष्ट भाव मत रखिये अपने लक्ष्य (इष्ट) की ओर यथाशक्ति सर्वदा दृष्टि रखनी चाहिए।

देव दर्शन का बहुत महत्व नहीं है। स्वयं साधना से देवत्व—लाभ किये बिना देव महिमा का बोध नहीं होगा। श्री गुरुदेव सदैव कहा करते हैं—लल्ला ! तुम्हें किसी विषय में चिंता नहीं करनी चाहिए। भगवान सदाशिव, महाप्रभुजी, स्वयं मैं सदैव तुम्हारे साथ हैं। ठीक तरह कर्म (साधना श्वास—प्रश्वास जप) करने पर यह समझ सकोगे और तुम्हें अभाव—बोध कभी नहीं होगा। गुरुदेव पर पूर्ण निर्भर रहो। यहाँ—वहाँ मत भटको। हृदय की व्याकुलता ही साधना है। गुरुदेव का आकर्षण ही स्वाभाविक योग है।

इस भीषण कलिकाल में कर्मरत रहो। पर–चर्चा पर–दोष–अनुसन्धान महापाप है। साधना को गर्त में डालने वाला है। साधन भजन में लगन चाहिए। अहंकार बड़ी बुरी चीज है। सम्पूर्ण साधना के शिखर से अहंकार पलभर में गिराती है।

गुरुदेव का कथन है–जो क्रिया तुम्हे बताई गई है उसका यथा–विधि (जाप) पालन करते चलो। इसे दूसरों पर मत प्रकट करो। उस गुह्य विषय को कहने से अन्तराय साधना में आता है। ठीक–ठीक तीन घण्टे क्रिया करने वाला इसी जीवन में अमर हो जाता है (संसार सिंह आदि)। इस संसार में दुःख–सुख एक दूसरे में बहुत ही घुले मिले हैं।

प्रारम्भ में साधना करते समय मन भटकेगा उसकी अधिक चिंता मत करना परन्तु जप रूपी क्रिया में लगे रहना। ऐसा करोगे तो जिस क्षण माल में मन्त्र–बल से मन अवरुद्ध होगा उसी क्षण इष्ट दर्शन हो जायेगा। तुम्हारा आसनस्थ (चाहे शवासन ही क्यों न हो) होकर क्रिया करना ही गुरु आज्ञा पालन है।

❋ ❋ ❋

## अर्चना

सिद्ध गुफा की रज से
निर्मल होत शरीर।
पाप ध्वस्त हो जाये सब
यथा जाहनवी नीर
भण्डारे की दाल से
जठराग्नि जग जाय।
रक्तचाप अरू उर विकार
छिन्न भिन्न हो जायें।।

आश्रम में सेवा करें।
करै दान और त्याग।।
सुखी होयें या जगत में।
खुलि जावें सब भाग।।

श्री प्रभु रामलाल की
स्तुति करै दिन रात।
कटि जायें बन्धन सकल
सुनिये साँची बात।।

जो नर नारी प्रेम से गाते।
उनके बिगड़े काम बन जाते।।
जो नर नारी श्रद्धा से पढ़ते।
उनकी झोली सदा शिव भरते।।

जो नर नारी स्तुति गावै।
उनके घर प्रभु प्रतिदिन आवै।।
जो नर नारी आसन साधै।
सकल साधना ते नर पावै।।

जो नर नारी चालीसा पढ़ते
रोग शोक से वे नर बचते
जो नर प्रभु जी की स्तुति गावे
बासे बैकुण्ठ परम पद पावै।

उनकी झोली भरै सदा
रामलाल भगवान।
जग तारण कारण प्रभु
पूरण करते काम।

# प्रभु चरणों में समर्पित

राजेश कुमार सिंह

सुनों–सुनों भाई प्यार से सुनों,
हमसे ही क्यों संसार से सुनो;
एक बार नहीं बारम्बार सुनो, सिद्ध गुफा की अमर कहानी,
प्रभु रामलाल की तपोभूमि, श्री चन्द्र मोहन बरदानी।
सुनो–सुनो...........।

सन् उन्नीस ग्यारह में, खुला भाग्य का ताला,
दी तपः भूमि को गुफा रूप, एक काली जटाओं वाला;
कण–कण में शक्ति भर कर बोले, योगी लीलाधारी,
किरणों इस पावन भूमि के, काटेंगे विपत्ति का जाला।
सुनो–सुनो.........।

आर्यावर्त, उत्तर प्रदेश आगरा गाँव संवाई,
जग के सुनहरे मानचित्र पर मौलिक जगह बनाई,
सिद्धों के सरताज पधारे, जड़ चेतन के स्वामी,
जग के पालन हार नाथ, अखण्ड ज्योति जलाई।
सुनो–सुनो..........।

तन–मन पुष्ट हो सबही का ऐसा हो संसार,
जीवन तत्व, मक्खन मिला, सब आसन का सार,
गुरु भक्त और योग व्रतधारी, सेवक हैं राजेश
बारम्बार नमन तुझको, श्री रामचन्द्र सरकार।
सुनो–सुनो........।

# सत्संग और योग

जनक कुलश्रेष्ठ (ग्वालियर)

न रोधयति मां योगो न सांख्यं धर्म एव च।
न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो नेष्टापूर्तं न दक्षिणा।।१।।
व्रतानि यज्ञश्छन्दांसि तीर्थानि नियमा यमाः।
यथावरुन्धे सत्संगः सर्वसंगापहो हि माम्।।२।।

श्रीमद्भागवत ११/१२/१

भगवान श्री कृष्ण जी ने उद्धवजी से सत्संग की महिमा बताते हुए कहा है कि मैं न योग से न सांख्य, धर्म, स्वाध्याय, तप, त्याग, इष्टपूजा, व्रत, यज्ञ, तीर्थ आदि से प्रसन्न होता हूँ। अर्थात् योग, ध्यान आदि की अपेक्षा सत्संग अधिक श्रेष्ठ है।

परन्तु इसके विपरीत भगवान श्री कृष्ण जी ने योग की महिमा बताते हुए गीता में कहा है—

तपस्विभ्योऽधिको योगी, ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः।
कर्मिभ्यश्चाधिको योगी, तस्माद् योगी भवार्जुन।।

गीता ६/४७

तथा

वेदेषु यज्ञेषु तपःसु चैव,
दानेषु यत्पुण्यफलं प्रदिष्टम्।
अत्येति तत्सर्वमिदं विदित्वा,
योगी परं स्थानमुपैति चाद्यम्।।

गीता ८/२८

अर्थात् तपस्वियों, ज्ञानियों तथा कर्मकाण्डियों से योगी श्रेष्ठ होता है। इसलिये हे अर्जुन ! तुम योगी बनो।

तथा

जो व्यक्ति वेदों के ज्ञान से, यज्ञ करने से, तपस्या करने से तथा दान देने से जिस पुण्य फल की प्राप्ति करता है और स्वर्ग की प्राप्ति करता है, इस फल का एक सिद्धयोगी अतिक्रमण करके परम पद की प्राप्ति करता है, जहाँ पहुँच कर जन्म—मरण के चक्कर से मुक्त हो जाता है।

इस प्रकार श्री मद्भागवत और गीता में भगवान के कहे हुए वचनों में विरोधाभास प्रतीत होता है। परन्तु यदि गहराई से विचार करें तो ज्ञात होगा कि भगवान के वचन विरोधी नहीं है, अपितु इन वचनों में साम्यता ही है।

प्रायः मनुष्य सत्संग उसी को समझते हैं जहाँ कुछ धार्मिक वृत्ति के व्यक्ति एकत्रित होकर भगवतचर्चा करते हैं। अथवा किसी विद्वान तथा संत के प्रवचन सुनने मात्र को ही सत्संग समझा जाता है। इस प्रकार की संगति एवं प्रवचनों के सुनने मात्र से साधक का कल्याण कम ही होता है।

श्री सद्गुरुदेव जी कहा करते थे कि सत्संग का अर्थ है सिद्ध योगी की संगति। "सतां महतां सिद्धानां संग-सत्संग"। सिद्ध पुरुष की संगति क्षण मात्र की भी पर्याप्त है। सिद्ध योगी यदि किसी मनुष्य को अपनी आँख से देख ले या उसे स्पर्श करके अथवा उसके मन में उस व्यक्ति के कल्याण करने का संकल्प उठ जाय, तब भी उस व्यक्ति का उद्धार हो जाता है। इस प्रकार सिद्ध संगति बड़े पुण्य कर्मों के कारण होती है।

सिद्ध पुरुष उसी को कहा जाता है जिसमें कर्तुम अकर्तुम अन्यथा कर्तुम की शक्ति होती है। अर्थात् सिद्ध पुरुष में यह शक्ति होती है कि किसी कार्य को करदे, किए हुए को बिगाड़ दे और बिगड़े हुए को पुनः ज्यों का त्यों बना दे। तात्पर्य यह है कि सिद्ध पुरुष सृष्टि की रचना कर सकता है। उसका संहार कर सकता है तथा पुनः सृष्टि को ज्यों का त्यों बना सकता है।

गीता में भी सिद्ध के लक्षण बताते हुए कहा है—"उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनाम् तत्वदर्शिनः" अर्थात् सिद्ध गुरु वेद वेदांगों का पूर्ण ज्ञाता हो तत्व विजयी हो। इस प्रकार के लक्षण वाले सिद्ध गुरु से शिष्य उपदेशित होकर अपने स्वरूप की प्राप्ति कर लेता है। तत्व विजयी का अर्थ होता है कि उस सिद्ध पुरुष ने पंच महाभूतों पर पूर्ण अधिकार कर लिया हो।

श्री हनुमान जी पूर्ण तत्व विजयी पुरुष थे। वायु पर अधिकार होने से वायु में वे उड़ सकते थे। हवा में उड़कर ही उन्होंने सौ योजन वाले समुद्र को पार करके लंका नगरी में प्रवेश किया। पृथ्वी तत्व पर अधिकार होने का ही यह परिणाम था कि वे द्रोणागिरि को उठाकर लंका लाये और श्री लक्ष्मण जी की प्राण रक्षा की थी। जिस समय वे मच्छर वेष धारण करके लंका में प्रवेश करने की चेष्टा कर रहे थे। तब प्रवेश द्वार पर पहरा देने वाली लंकिनी ने उनको रोक कर कहा 'मोर अहार लंक कर चोरा'। तब हनुमान जी ने 'मुठिका एक महा कपि हनी, रुधिर बमत धरनी ढनमनी'। अर्थात् हनुमान जी ने अपनी मुष्टिका से लंकिनी को स्पर्श करके शीघ्र शक्तिपात किया। शक्तिपात होते ही उसने जितने पृथ्वी पर पाप कर्म किये तथा हत्यायें की उन सबका वमन कर दिया और ढनमनी हो गई अर्थात् अपने स्वरूप में स्थित हो गई। उसकी राक्षसी शरीर से मुक्ति हो गई। तभी उसने कहा था :—

तात स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिअ तुला इक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि, जो सुख लव सत्संग।।

इस प्रकार लंकिनी का सिद्ध पुरुष के स्पर्श करते ही क्षण मात्र में उद्धार हो गया।

अपने गुरु श्री विश्वामित्र जी के साथ श्री राम अपने लघु भ्राता श्री लक्ष्मण जी के साथ

राक्षसों का संहार करते हुए एक निर्जन स्थान पर पहुँचे। वहाँ उन्होंने एक नारी (अहिल्या) को शिलावत परपुरुष के साथ रमण करने के अपराध में पतिदेव से शापित होकर हजारों वर्षों से तपस्या में रत थी, देखा। बाल्मीकि रामायण के अनुसार पत्थर नहीं थी बल्कि प्रायश्चित करते हुए शिलावत होकर अपनी साधना में अनेक वर्षों से रत थी। श्री रामजी ने उसको स्पर्श किया। स्पर्श करते ही उसकी प्रायश्चित रूप साधना पूर्ण हो गई और उसका उद्धार हो गया। यह था श्री रामजी के सिद्ध पुरुष होने का प्रमाण।

श्री लक्ष्मणजी ने जनक पुरी में धनुष यज्ञ के समय **''कंदुक इव ब्रह्मांड उठाऊँ''** कहकर यह बता दिया कि वे तत्वविजयी सिद्ध पुरुष थे।

द्वापुर युग में श्री कृष्ण जी भी सिद्ध पुरुष थे। मथुरा नगरी में उनके स्पर्श करने मात्र से ही एक कुरूप नारी सुंदरी बन गई। गोवर्धन पर्वत को अपनी एक उंगली से उठाकर ब्रजवासियों की इन्द्रकोप से रक्षा की थी।

वर्तमान काल में संत ज्ञानेश्वर भी एक तत्व विजयी सिद्ध पुरुष थे। एक दिन अधिक वर्षा के कारण ईंधन गीला हो गया था। भोजन बनाने की समस्या उपस्थित हो गई। उनकी बहिन मुक्ता ने भोजन पकाने सम्बन्धी समस्या अपने भाई ज्ञानेश्वर को बताई। श्री ज्ञानेश्वर जी ने अपनी बहिन से कहा कि आज का भोजन तुम मेरे पेट पर बना लो। बहिन मुक्ता ने लोहे का तवा पेट पर रखा और रोटियाँ सेकी। फिर दोनों ने भोजन किया। कहने का तात्पर्य यह है कि श्री ज्ञानेश्वर जी को अग्नि तत्व पर पूर्ण अधिकार था। आज भी भारत भूमि पर गुप्त रूप से ऐसे तत्व विजयी सिद्ध पुरुष उपस्थित हैं।

वर्तमान में हमारे दादा गुरु प्रभु रामलाल जी महाराज भी उच्च कोटि के सिद्ध योगी हो चुके हैं। पंजाब में लाला लाजपत राय के नेतृत्व में असहयोग आन्दोलन के उत्साही कार्यकर्ता मेरे सद्गुरुदेव के वरिष्ठ गुरुभाई श्री मुल्खराज जी महाराज एक दिन अपना भविष्य जानने की उत्कंठा से श्री प्रभु जी के पास अपनी जन्म-पत्री लेकर आये। श्री प्रभु जी ने उनको देखकर अपने मन में विचार किया कि यह बच्चा तो हमारा संस्कारी है। पर इसका संस्कार काल आठ वर्ष के उपरान्त आयेगा। किन्तु अब चूँकि इस पर हमारी दृष्टि पड़ गई है तो इसका कल्याण करना हमारा कर्तव्य है। श्री मुल्खराज जी से आवश्यक प्रश्न पूछने के उपरान्त उनको ध्यान में बैठने का आदेश दिया कुछ समय बाद उनकी समाधि लग गई और लगातार आठ दिन समाधिस्थ रहकर वे समाधि से उठे। इस प्रकार श्री प्रभुजी ने अपनी दृष्टि मात्र से ही श्री मुलखराज जी को तुरीयावस्था प्रदान कर दी।

श्री सिद्धगुफा सवाई से जब श्री प्रभुजी आकाश मार्ग से हिमालय की ओर जा रहे थे, तब बिहार प्रान्त के जमुनिया घाट के जंगलों में एक वृद्ध तथा एक युवक को उन्होंने, हाथों में नंगी तलवारें लिए हुए झाड़ियों में छिपा हुआ देखकर उनसे उनके छिपने का कारण पूछा। वृद्ध ने

कहा कि हम क्षत्रिय परिवार के हैं। हमारी रामरती नाम की पुत्री कुमार्ग गामिनी हो गई है। मदिरा पान करती है और गुंडों के साथ रहती है। इस कारण हम गाँव में मुँह दिखाने योग्य नहीं रह गए हैं। आज हम पिता–पुत्र ने उसकी हत्या करने का विचार कर लिया है। श्री प्रभु जी इस जघन्य कार्य की निन्दा कर ही रहे थे। इतने में ही रामरती मदिरा के नशे में चूर हुई चार–छै गुंडों के साथ वहाँ आ गई। श्री प्रभु जी ने रामरती से कुछ चर्चा करने के उपरान्त ध्यान में बिठा दिया। श्री प्रभु जी उसे ध्यान में बिठाकर हिमालय की ओर प्रस्थान कर गए। बारह वर्ष बाद जब श्री प्रभुजी हिमालय से वापिस आ रहे थे तब ध्यान में ही उसने प्रभुजी के आगमन को देख लिया तथा उपस्थित जन–समुदाय को आने वाली रेलगाड़ी से श्री प्रभुजी को यहाँ लाने को कहा। ज्यों ही श्री प्रभुजी वहाँ आये तो रामरती अपनी बन्द आँखों से ही श्री प्रभुजी का स्वागत करने दौड़ी। श्री प्रभुजी ने रामरती से कहा कि तुमने तो जंगल में मंगल कर दिया है। यहाँ तो अनेक मन्दिर और धर्मशालाएँ बन गई हैं। इस पर रामरती ने कहा कि प्रभुजी मैंने तो आज ही अपनी आँखें खोली हैं। आज ही ध्यान से उठी हूँ। मुझे नहीं मालूम कि ये भवन किसने और क्यों बनवाए हैं ? इस प्रकार श्री प्रभुजी ने एक पतिता नारी को अपने योग बल से परम योगिनी बना दिया।

पं० श्री जगन्नाथजी श्री प्रभुजी के कौटुम्बिक भ्राता थे। वे विद्वान भी थे और प्रभु जी से आयु में बड़े थे। प्रायः वे श्री प्रभुजी से कहा करते थे कि तुम्हारे घर–परिवार त्यागने का क्या लाभ हुआ ? एक परिवार का त्याग किया तो तुमने अपने शिष्यों का समुदाय एकत्रित करके दूसरा परिवार बना लिया। इससे तो यही अच्छा होता कि तुम हिमालय में जाकर तपस्या करके अपना कल्याण करते। कालान्तर में अमृतसर में श्री प्रभुजी ने इधर तो अपना शरीर छोड़ा और उधर अपने दूसरे शरीर से बटाला के गुरु के बाग में पं० श्री जगन्नाथ जी के पास पहुँचे और कहा कि भाई जी आज मैंने आपकी आज्ञा स्वीकार कर ली है। और अब मैं हिमालय में तपस्या के लिए जा रहा हूँ। पंडित जी के साथ, दो–तीन घंटे भगवत् चर्चा करते हुए रहकर व्यतीत किए। भोजन किया साथ ही आध्यात्मिक चर्चाएँ होती रहीं। जब श्री प्रभुजी चलने को हुए तो उन्होंने पंडित जी से कहा कि भाई जी आप मेरे आश्रम जाकर मेरे शिष्यों को मेरे हिमालय जाने का समाचार दे देना। उक्त समाचार देने पंडित जी आश्रम आये। आगे ही पंडितजी देखते हैं कि श्री प्रभुजी के शिष्यगण उनके शव का अंतिम संस्कार करने की तैयारी कर रहे हैं। यह देखकर पंडितजी अपना शिर धुन धुन कर चीखने लगे और बिलखते हुए कहने लगे कि मैंने अभी तक श्री प्रभुजी को नहीं पहिचाना। आज पहिचाना कि वे पूर्ण तत्व विजयी सिद्ध पुरुष थे।

इस प्रकार भगवान श्री कृष्ण ने प्रसंगानुसार सत्संग और योग की महिमा का वर्णन किया है। वस्तुतः सत्संग और योग अन्योन्याश्रित है। अच्छे सत्संग के लिए सिद्ध योगी का होना परम आवश्यक है तभी सत्संग का त्वरित फल प्राप्त होता है।

❋ ❋ ❋

मुकेश श्रीवास्तव

## .......और मैनु क्या चाहिये ?

मैनु सद्गुरू दा मिल गया प्यार, और मैनु क्या चहिये
रे मिल गया भक्ति का संसार, और मैनु क्या चहिये ?

प्रभुजी के चरणों में सौंपा मैंने इस जीवन को
सद्गुरू की भक्ति में लगाया अपने तन मन धन को

मिट गये कष्ट, क्लेश, विकार, और मैनु क्या चहिये।
मैनु सद्गुरू का मिल गया प्यार, और मैनु क्या चहिये ?

भक्तों पे कष्ट जो आएँ तो प्रभु जी सदा बचाते हैं
प्रभु चरणों में रमने वाले भव–बन्धन से तर जाते हैं।

मैनु मुक्ति का मिल गया द्वार, और मैनु क्या चहिये
मैनु सद्गुरू का मिल गया प्यार, और मैनु क्या चहिये ?

पड़े हो किसी मुसीबत में या हों कष्टों के घेरे में
हों भंवरजाल में फंसे हुए या हों घनघोर अंधेरे में

प्रभु जी लेंगे हमें उबार, और मैनु क्या चहिये
मैनु सद्गुरू का मिल गया प्यार, और मैनु क्या चहिये ?

जो जन करते हैं प्रभु भक्ति, जिनकी प्रभु में आसक्ति है
वो मनचाहा पा जाते हैं ये सद्गुरू ही की भक्ति है।

हैं वो सकल ब्रह्म अवतार, और मैनु क्या चहिये
वो कर देंगे बेड़ा पार, और मैनु क्या चहिये ?

मैनु सद्गुरू का मिल गया प्यार, और मैनु क्या चहिये
रे मिल गया भक्ति का संसार, और मैनु क्या चहिये ?

# (गुरु करते भव पार)

डॉ० रुद्रदत्त चतुर्वेदी

भारत प्राचीन काल से आध्यात्म प्रधान देश रहा है। संसार में सर्वाधिक आध्यात्म के गूढ़ रहस्य इस देश की थाती रहे हैं। ये बात अलग है कि सूत्रों की अग्राह्यता और साहित्य के नाश से बहुत कुछ अब भी अनुपलब्ध है। नवीन वैज्ञानिक शोध सिद्ध करते हैं कि मनुष्य अपने मस्तिष्क के अधिकतम पाँच प्रतिशत भाग का उपयोग करता है शेष भाग निष्क्रिय पड़ा रहता है। यदि उसका उपयोग होने लगे तो व्यक्ति के पास अपार क्षमतायें हैं। प्राचीन मनीषी इस तथ्य से अवगत थे और ये जानते थे कि योग साधना से इन क्षमताओं का अधिकतम विकास सम्भव है अतः वे इस मार्ग के प्रदर्शक अर्थात् गुरु की महत्ता भी जानते थे।

इसीलिए व्यक्ति के अंतरतम में गुरु कृपा से उद्घाटित तत्व ज्ञान और अन्तदृष्टि से उन्होंने जो जाना वह हम सबके समक्ष प्रस्तुत किया। बड़े सुखद आश्चर्य की बात है कि अनेक मत, अनेकानेक सम्प्रदायों और उनमें प्रचलित विभिन्नताओं के उपरान्त भी "गुरु तत्व" की अवधारणा सबमें समान और उच्चकोटि की रही है। चूँकि वेद अपौरुषेय थे अतः स्मृति के सहारे ज्ञान की उस शाश्वत व पुनीत परम्परा को "गुरु" ही अक्षुण्ण रखा पाये हैं यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि समग्र भारतीय शास्त्र एवं विद्या में गुरुओं के ज्ञान का ही विश्लेषण है।

यहाँ एक बात और स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि इस भारतीय शब्द गुरु का पर्यायवाची शब्द कोई दूसरा नहीं है। शिक्षक और अध्यापक शब्द गुरु की गरिमा तक नहीं पहुँच पाते। जहाँ शिक्षक और अध्यापक लौकिक सूचनाओं के प्रदाता मात्र हैं वहीं गुरु लौकिक और पारलौकिक दोनों ही ज्ञान गंगाओं में अवगाहन करा कर मानव जीवन को पूर्ण सार्थकता प्रदान करते हैं। भारतीय गुरु चराचर में व्यक्त और अव्यक्त रूप में व्याप्त है। इसीलिए कबीर कहते हैं—

**"गुरु मानुष करि जानते, ते नर कहिए अंध"**

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से ज्ञान की प्रगति स्थूल से सूक्ष्म की ओर होती है अतः गुरु शरीर धारी भी है और अशरिरी भी। गुरु व्यक्ति भी है और तत्व भी। महामहोपाध्याय गोपीनाथ कविराज की मान्यता है कि जो मानव के भीतर "सत्स्त्रोत" प्रवाहित करा देते हैं—जो प्रज्ञानेत्र खोल देते हैं—वे गुरु हैं। "ग" का अर्थ सिद्धि यानी सफलता भी है अतः इस जीवन में समायोजन की कला से सफलता, और जन्म जन्मान्तरों का कल्मष दूर करने की क्षमता भी गुरु में है। मनुस्मृति (२/११७) में लौकिक, वैदिक और आध्यात्मिक तीन प्रकार के गुरु बताये हैं जो क्रमशः श्रेष्ठतर हैं :

**"लौकिकं वैदिकं वाऽपि तथाऽध्यात्मिकमेव च।**
**आददीत यतो ज्ञानं तं पूर्वमभिवादयेत।।**

यहाँ गुरु और सद्गुरु में अंतर जान लेना भी आवश्यक है। सत्य विषय की चर्चा करने

वाला और उसके प्रति जिज्ञासा उत्पन्न करने वाला गुरु है परन्तु सत्य का साक्षात्कार कराने वाला सद्‌गुरु है। सत्संग और संत समागम सद्‌गुरु के अग्रदूत होते हैं। जहाँ संत समागम से धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की प्राप्ति होती है, वहीं गुरु सत्संग से अनेक फल प्राप्त होते हैं ऐसा कबीर का विचार है :

**"तीरथ नहाये एक फल, संत मिले फल चार।**
**सद्‌गुरु मिले अनेक फल, कहत कबीर विचार।।"**

यहाँ एक प्रश्न उठता है कि भारतीय अवधारणा में गुरु की इतनी महत्ता क्यों ? और पाश्चात्य जगत में अध्यापक इतना गौण क्यों ? उत्तर सरल है। पाश्चात्य जगत के ज्ञान की सीमा लौकिक जगत और भौतिक सुखों तक सीमित है जब कि भारतीय जीवन पद्धति में धर्म, अर्थ और काम तथा उनके समन्वय का सुपरिणाम (रिजल्ट) मोक्ष भी जीवन का लक्ष्य है। चूँकि मोक्ष तीन पुरुषार्थों का समन्वय (बैलेंस) है, और समन्वय की यह क्रिया अति दुरूह है जो हर एक के बस की बात नहीं, क्यों कि उसके लिए विशिष्ट कौशल (स्पेशल स्किल) आवश्यक है। अतः उसमें निस्णात भारतीय गुरु पूज्य है, वंदनीय है इसीलिए आद्य आचार्य शंकर अपनी प्रश्नोत्तरी में लिखते हैं :

**"अपार संसार समुद्र मध्ये**
**समज्जतो ये शरणं किमस्ति,**
**गुरोर कृपालौ कृपया वदैस्तद् ?**
**विश्वेश पादाम्बुज दीर्घ नौका।"**

इसीलिए गीता में भी कहा गया है : "तद्विद्धि प्रणिपातेन, परिप्रश्नेन सेवया" परन्तु अगर अमेरिकी मनोविज्ञानी थार्नडाइक यही तीन नियम (अभ्यास का नियम, प्रभाव का नियम और तत्परता का नियम) बतादें तो वह महान खोज है। सखेद लिखना पड़ता है कि भारतीय ज्ञान के प्रति हमारी अप्रोच वाया पश्चिम हो गई है। गुरु और शिष्य को विशेषतायें (करैक्टरिस्टिक्स) बताते हुए आचार्य शंकर लिखते हैं—प्रश्नोत्तर के रूप में :

**को वै गुरू ? यो ह हितूपदिष्टा।**
**शिष्यतु कः ? यो गुरु भक्त एव।।**

पुनः प्रश्न कि गुरु की इतनी महत्ता क्यों ? जो ज्ञान वाणी से वर्णित हो सकता हो और ग्रन्थों में लिपिबद्ध हो सकता हो उसे गोपनीय नहीं कह सकते। जिस ज्ञान का साक्षात्कार गुरुदेव कराते हैं वह गुह्य है, रहस्यों का रहस्य है। वह अनुभव गम्य है और अनुभूति तर्कों से परे होती है जो श्रद्धा और नियमितता से प्राप्त होती है। शिष्य की तत्परता गुरुप्रेरक होती है। प्राचीन ऋषियों ने विद्या को दो भागों में विभाजित किया था—परा और अपरा। समग्र भौतिक ज्ञान जो ज्ञानेन्द्रियों और बुद्धि द्वारा ग्राह्य हो वह परा और जो इससे परे और अव्यय है—वह अपरा। इसी से परमब्रह्म तत्व को जाना जाता है। इसी को क्रियाज्ञान कहते हैं। कबीर के शब्दों में—

"सद्गुरु सोइ दया करि दीन्हा
तातें अनचिन्हार मैं चीन्हा।"

गुरु गोरखनाथ भी कुछ ऐसा ही कहते हैं–

"मछीन्द्र प्रसादे जती गोरखनाथ आरती गावै
नूर झिलमिल दीसै, तहाँ अनन्त न आवै।"

यही बात श्रुति में भी वर्णित है–

"न चक्षुषा ग्रह्यते, नापि वाचां"

चूँकि ये समस्त ज्ञान अपरा विद्या से सम्बन्धित है, जिससे पाश्चात्य जगत अछूता रहा था, अतः भारतीय वाङ्मय में गुरुमहत्ता मुहर्मुहुर वर्णित है और पाश्चात्य जगत गुरु के लौकिक ज्ञानदाता रूप तक ही सीमित रहा। लोक परलोक में आस्था और अनुभूति रखने वाला ही गुरु के महत्व को समझ सकता है।

यह इस देश का बड़ा सौभाग्य रहा है कि जब यह राष्ट्र पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था और प्राचीन विद्यायें लुप्त प्राय थीं तब आद्यशंकराचार्य, योगिराज मत्स्येन्द्रनाथ, गुरुनानकदेव, सन्तज्ञानेश्वर और संत कबीर की श्रेणी में ही सन् १८८८ में प्रभु श्री रामलाल का अवतरण हुआ और उन्होंने हठयोग की, केवल ग्रन्थों में वर्णित क्रियाओं, व्यावहारिक शिक्षा देकर और सिद्धयोग के द्वारा शक्तिपात के माध्यम से समाधि लाभ कराकर इस विद्या को पुनर्जीवित किया। उनके सद्शिष्य और हमारे गुरुदेव पूज्यपाद चन्द्रमोहन जी (जिन्हें श्री प्रभुजी ने पातंजल योग के सूत्रों की प्रत्यक्षानुभूति कराई थी) ने इस विद्या को आगे बढ़ाकर सिद्ध सद्गुरु के रूप में प्रतिष्ठा पाई और एकाधिक बार अखिल भारतीय योग सम्मेलन के अध्यक्ष पद को सुशोभित किया। श्री गुरुदेव के शब्दों में–"मेरी हमेशा यह इच्छा रहती है कि अपने हर बच्चे के मन में योग सिद्धान्तों को कूट–कूट कर भर दूँ ताकि वे योग के यथार्थ रूप को समझ जायें और साधना में जुट जायें।"

श्री प्रभुजी, उनके शिष्यों–प्रमुख रूप से हमारे गुरुदेव और उनके शिष्य अवधूत योगी टाटबाबा (संचालक, आदित्य योग फाउन्डेशन–नई दिल्ली) द्वारा गुरुदेव द्वारा प्रदत्त दीक्षा से प्रज्वलित ज्ञानदान की सद्गुरु परम्परा आगे बढ़ रही है। श्री सिद्ध गुफा संवाई और इन आश्रमों से जुड़े सभी व्यक्ति सौभाग्यशाली हैं। यह सुखद स्थिति है कि भौतिकता जन्य विसंगतियों की पीड़ाओं से त्रस्त मनुष्य पुनः चक्रक्रम में आध्यात्म की ओर उन्मुख है और शीघ्र ही यह समय प्रतीक्षित है जब हम सभी कहेंगे–

"गुरु बड़े गोविन्द से, करके देख विचार,
गोविन्द भव सागर दिया, गुरु करते भव पार।।"

* * *

# श्री प्रभु रामलाल चालीसा

गया प्रसाद भारद्वाज

श्री प्रभु रामलाल अवतारी।
श्री प्रभु रामलाल त्रिपुरारी।।
श्री प्रभु रामलाल जग कन्ता।
श्री प्रभु रामलाल भगवन्ता।।

श्री प्रभु रामलाल हितकारी।
श्री प्रभु रामलाल कामारि।।
श्री प्रभु रामलाल सर्वेश्वर।
श्री प्रभु रामलाल अखिलेश्वर।।

श्री प्रभु रामलाल पापारि।
श्री प्रभु रामलाल सुखकारी।।
श्री प्रभु रामलाल जगदीश्वर।
श्री प्रभु रामलाल विश्वेश्वर।।

श्री प्रभु रामलाल करूणामय।
श्री प्रभु रामलाल कृपामय।।
श्री प्रभु रामलाल योगीश्वर।
श्री प्रभु रामलाल करुणेश्वर।।

*रामलाल सुमिरे सदा, जे नर चतुर सुजान।*
*तेहि के कारज सकल शुभ, सिद्ध करें भगवान।।*
*(महाप्रभु श्री रामलाल जी की जय शरणम्)*

श्री प्रभु रामलाल जगकर्ता।
श्री प्रभु रामलाल भय हर्ता।।
श्री प्रभु रामलाल योगी वर।
श्री प्रभु रामलाल दानीवर।।

श्री प्रभु रामलाल गुणकारी।
श्री प्रभु रामलाल दुखहारी।।
श्री प्रभु रामलाल दयाला।
श्री प्रभु राम काल के काला।।

श्री प्रभु रामलाल सिद्धेश्वर।
श्री प्रभु रामलाल भूतेश्वर।।
श्री प्रभु रामलाल गुणराशि।
श्री प्रभु रामलाल सुख राशि।।

*सिद्ध गुफा में बास करें, राम लाल जगदीश।*
*साधक के घट में रहें, आशुतोष वागीश।।*

श्री प्रभु रामलाल दयालु।
श्री प्रभु रामलाल कृपालु।।
श्री प्रभु रामलाल सर्वात्मा।
श्री प्रभु रामलाल परमात्मा।।

श्री प्रभु रामलाल दुखहारी।
श्री प्रभु रामलाल मुरारी।।
श्री प्रभु रामलाल भगवाना।
श्री प्रभु रामलाल सुखनामा।।

श्री प्रभु रामलाल सदा शिव।
श्री प्रभु रामलाल महाशिव।।
श्री प्रभु रामलाल लाल सुजाना।
श्री प्रभु रामलाल निधाना।।

## उत्थित पद्मासन

विधि—यह आसन बिल्कुल पद्मासन ही है। अन्तर केवल इतना ही है कि पद्मासन लगाकर पालथी के बराबर अपने दोनों हाथों को जमाकर व पेट को अन्दर की ओर सिकोड़ते हुए अपने शरीर जितना भी अधिक उठाया जा सके उठा दो, छाती को तनाव के साथ बाहर की ओर निकाल कर व सामने देखते हुए करें। इसको करने वाला साधक अपने को झूले की तरह झुला भी सकता है।

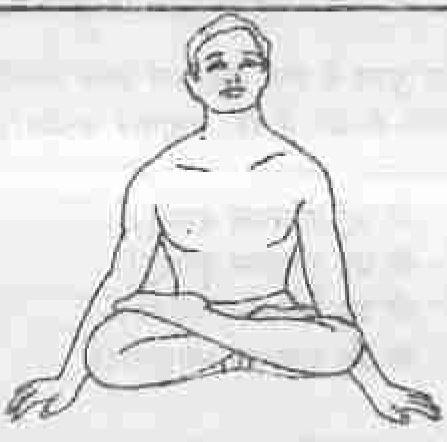

उत्थित पद्मासन

समय—साधारण आधे मिनट से प्रारम्भ करके दो मिनट तक किया जा सकता है।

लाभ—भुजबल की वृद्धि, छाती का विकास, क्षुधा वृद्धि एवं सभी प्रकार के उदर रोगों का नाश करने वाला है।

## कुक्कुटासन

पद्मासनं समासाद्य जानयोरन्तरे।
करौ कूर्पराभ्यां समासीनं मञ्चरथ कुक्कुटासनम्।।

विधि—पद्मासन लगाकर सीधे बैठने पर जंघा स्थान में जहाँ दोनों पैरों के पंजे रखे हैं उनसे आगे पंजे व पिंडलियां के बीच में से अपने हाथों को निकाले व उत्थित पद्मासन की ही तरह अपने दोनों बाजुओं पर सारे शरीर को तौल दें, जितना हो सके गर्दन को उठाकर छाती को सामने निकाली हुई रखने का प्रयत्न करें। इसी का नाम कुक्कुटासन है।

समय—अपने शरीर का बलाबल देखकर आधे मिनट से पाँच सैकन्ड बढ़ाते हुए दो मिनट तक ले जाओ।

फल—पद्मासन वाले व उत्थित पद्मासन वाले सभी लाभ इसके करने से होते हैं। एक बात विशेष है यदि साधक थोड़ा अश्वनी मुद्रा के ढंग से अपनी गुदा आकुंचन व प्रसारण करता रहे तो पूर्ण आरोग्य देता है एवं स्तम्भन को बढ़ाता है।

## कूर्मासन

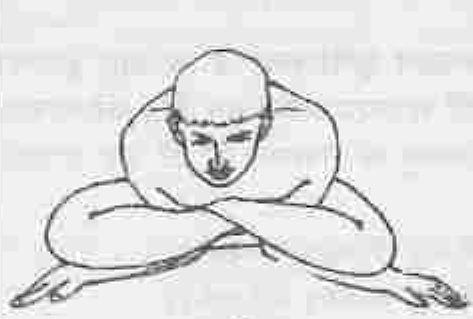

कूर्मासन

**विधि**—पद्मासन लगा करके पूर्वोक्त विधि से कुक्कुटासन की ही तरह से अपने दोनों हाथों को बीच में थोड़ा रिक्त स्थान रह जाता है। वहीं से अपने दोनों हाथों को अधिक से अधिक मात्रा में पैरों के नीचे से निकाल कर फैला दें एवं अपनी छाती को घुटनों तक बढ़ाकर पट्टों पर जमा दें व गर्दन जितनी भी उठा सकें उठाकर सामने देखते रहें। इसको कूर्मासन या कच्छपासन कहते हैं।

**समय**—प्रायः पूर्वोक्त ही है। २० सैकन्ड से अपने बलाबल को देखकर शुरू करें व डेढ़ या २ मिनट तक अभ्यास में ले आयें।

**लाभ**—उदर के वात विकार नष्ट होते हैं व जठराग्नि बढ़ती है। यकृत प्लीहा के रोग शान्त होते हैं।

## मत्स्यासन

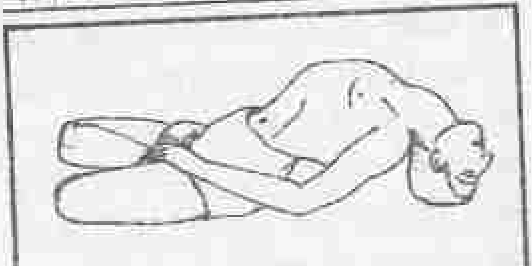

मत्यासन

**मुक्त पद्मासनं कृत्वा उत्तानशयनं चरेत्, कर्पराभ्यां शिरोवेष्ट्य मत्स्यासनं तुरोगदृर।**

**अर्थात** मुक्त पद्मासन लगाकर सीधा लेट जायें व अपने दोनों हाथों को कोहनी से आगे के हिस्सों को परस्पर वेकृित करके शिर के नीचे लगालें। यह सर्व रोग नाशक मत्स्यासन है। (अथवा अपने दोनों हाथों से दोनों पैरों के अँगूठे पकड़कर कोहनियाँ जमीन में लगाकर पेट और छाती को ऊपर की ओर निकाल कर गर्दन को मोड़कर पीछे की ओर उतान देने की भी प्रणाली प्रचलित है।) यह मत्स्यासन का रूप सर्वसाधारण के अभ्यास के लिये अत्यन्त सरल है एवं इस आसन को लगाकर शरीर के सन्तुलन को ध्यान में रख कर यदि जल पर इसी प्रकार लेटे रहने का अभ्यास कर लें तो आराम से लेटा जा सकता है। बड़ा आनन्द आयेगा। वृत्ति स्वतः ही एकाग्र हो जायेगी। जो व्यक्ति तैरना न जानता हो उसे ही थोड़े जल में इसका अभ्यास करना चाहिये।

**समय**—आधे मिनट से पाँच–पाँच सैकेन्ड बढ़ाते हुए दो मिनट तक।

**लाभ**—उदर विकारों के लिये लाभप्रद है।

## उत्तान कूर्मासन

**कुक्कुटासन बन्धस्थं कराभ्यां धृत कन्धरं। पीठं कूर्मवदुत्थानं मेतदुत्तान कूर्मकम्।।**

उत्तान कूर्मासन

विधि—पद्मासन लगाकर व अपने दोनों हाथों को कुक्कुटासन की ही तरह उरूभाग में रखे हुए पैरों के पंजे व पिंडलियों के बीच में हाथ निकालकर व ऊपर की ओर ले जाकर अपने कन्धों पर हाथ जमा दें या सम्भव हो सके तो अपने दायें व बायें हाथ के पंजों को परस्पर गर्दन के पीछे से मिलाकर पकड़े रहें। इस आसन को उत्तान कूर्मासन कहते हैं। आजकल योगासनों की श्रेणियों में इसको गर्भासन भी कहा जाता है क्योंकि इस आसन को करने वाले के शरीर की आकृति गर्भस्थ बालक जैसी बन जाती है।

यदि प्लावनी कुम्भक लगाकर करें तो अत्यन्त ही सहज हो जायेगा।

## दूसरा प्रकार

इसी प्रकार मुक्त पद्मासन (साधारण पद्मासन जिसमें हाथों को पीछे की ओर से घुमाकर जंघा स्थल में जमाये हुए पैरों के अँगूठे पकड़ने की आवश्यकता नहीं पड़ती) लगाकर सीधे लेट जायें व अपने दोनों पैरों के अंगूठों को दृढ़ता से पकड़ लें (दाहिने हाथ से बायें पैर के अंगूठे को, बायें हाथ से दाहिने पैर के अंगूठे को) कोहनियों को जमीन में लगाये रखें, शिर भाग को थोड़ा उल्टा कर पीछे की ओर थोड़ा मरोड़कर मस्तक जमीन में लगा दें। अपने पेट व छाती के भाग को ऊपर की ओर उठाये रखें। पैरों के अंगूठे सहज तनाव से ऊपर की ओर खींचे रहें। यह भी मत्स्यासन प्रसारित है।

लाभ—इसका प्रभाव मल विसर्जनी नाड़ियों पर पड़ता है। अतः शौच शुद्धि के लिये, आँतों की पुष्टि के लिये व अपान शोधन के लिये उत्कृष्ट है।

समय—आधे मिनट से आरम्भ करके शरीर के बलाबल को देखकर शनैः—शनैः अभ्यास बढ़ायें व कम से कम १० मिनट तक ले जायें। अवश्य लाभ होगा।

इसका विपरीत क्रम—इस आसन को उल्टा लेटकर भी किया जाता है। मुक्त पद्मासन लगाकर उल्टा लेट जायं, पैरों के दोनों अँगूठे उसी प्रकार से दाहिने हाथ से बायें पैर का अँगूठा व बायें हाथ से दाहिने पैर के अँगूठे को पकड़कर ऊपर की ओर खींचे। पेट, छाती व शिर को जितना ऊपर की ओर उठाया जा सके उठायें। सिर को पीछे की ओर इतना मोड़ें कि पीछे की ओर देखने का प्रयत्न करने पर दिखाई दे। यह इसी आसन का उल्टा लेटकर करने से विपरीत क्रम है। अन्तर केवल इतना ही है कि जब साधक अपने पैरों के अँगूठों को पकड़कर ऊपर की ओर खेंचेगा तो पीछे लगी हुई मुक्त पद्मासन वाली पालथी भी कुछ ऊपर को अवश्य उठ जायेगी।

समय—पूर्ववत् शनैः—शनैः बढ़ायें, प्रथमाभ्यास में जल्दी न करें।

लाभ—सभी पूर्वोक्त हैं, केवल इस विपरीत क्रम में भूख अधिक लगती है, क्योंकि इससे जठराग्नि प्रदीप्त होती है।

* * *

# गुरुदेव करुणासिन्धु

राजेश कुमार श्रीवास्तव

गुरुदेव करुणासिन्धु
हे तीन लोक माली।
उर में प्रकाश भर दो
अज्ञान कर दो खाली।।

१. हिम पथ से सिद्ध कितने
आकर शरण तुम्हारी
तुमसे 'प्रसाद' पाये
लौटे न कभी खाली
उर में प्रकाश........

❋

२. हम तो कभी नहीं थे
सिद्धयोग के अधिकारी
ये तो आपकी दया थी
चरणों में जगह पा ली
उर में प्रकाश..........

❋

३. कितना दयालु हृदय
होगा प्रभु तुम्हारा
हम जैसे पत्थरों में
प्रभु तुम ने जान डाली
उर में प्रकाश.........

❋

४. देखीं अजब तुम्हारी
लीलायें प्यारी–प्यारी
कभी राम बन गये तुम
कभी बन गये मुरारी
उर में प्रकाश.......

❋

५. अलुपुर के धन्य जंगल
तुझे याद होगा वो दिन
गुरु के नगन को तेरी
झुकती थी डाली–डाली
उर में प्रकाश.......

❋

६. वो धन्य होंगे कितने
आँखों में थे तुम्हारी
तरसे थे सिद्ध मुनिजन,
लखने को छवि तुम्हारी
उर में प्रकाश.........

❋

७. गुरुदेव इस धरा पर
नित जन्म हो तुम्हारा
यूँ ही पिलाया करना
भर–भर के योग प्याली
उर में प्रकाश......

❋ ❋ ❋

## गुरुदेव का पावन जन्मोत्सव

*गुरुदेव श्री चन्द्रमोहन जी महाराज का पावन जन्मोत्सव पर्व २२ अक्तूबर को श्री सिद्धगुफा सवांई आगरा, अलुपुर जि० पानीपत, आर. के. पुरम नई दिल्ली आदि सभी आश्रमों में हर्षोल्लास के साथ मनाया जा रहा है। गुरुभक्तों को चाहिये कि अपनी सुविधानुसार निकटस्थ केन्द्रों में पहुँच कर गुरुदेव का पूजन–अर्चन कर पुण्य लाभ लें।*

## सम्पादकीय सूचना

*'**सिद्धयोग**' पत्रिका का मुख्य उद्देश्य योग के शाश्वत् सिद्धान्तों को सरल भाषा एवं रीति से प्रचारित करना है। इसके लिए इसमें स्मृति–पुराण–श्रुति एवं योग साहित्य में वर्णित एवं यौगिक विषयों से सम्बन्धित प्रेरणादायी सामग्री प्रकाशित की जाती है। किसी मत अथवा सम्प्रदाय, आचार्य परम्परा एवं उनके सिद्धान्तों का खण्डन–मण्डन करना इस पत्रिका की प्रकृति नहीं। पत्रिका के सम्पादन में इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है कि जो भी लेख आदि सामग्री इसमें प्रकाशित हो वह पूर्णतः यौगिक विश्व को समर्पित हो और उससे पाठकगण एवं साधक उत्तरोत्तर लाभान्वित होते रहें।*

*हमारे इस प्रयास में प्रबुद्ध लेखकों का सदैव ही महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। अतः लेखकों को चाहिये कि वे सिद्धयोग परम्परा से सम्बन्धित एवं योग विषयक शोधपूर्ण लेख स्वच्छ एवं सुस्पष्ट अक्षरों में कागज के एक ओर ही लिखकर निम्नांकित पते पर संप्रेषित करें–*

**ब्र० दासलाल शर्मा** सम्पादक
*सिद्धयोग कार्यालय*
*श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र सवांई (एत्मादपुर) आगरा*

श्री रामलाल प्रभवे नमः

योग सेती है ऐसा योग में भासा नहीं।
योग साधन के बिन कोई मुक्ति पाया नहीं।।

श्री चन्द्रमोहन गुरवे नमः

# प्रभु श्री रामलाल संगीत महाविद्यालय

गणेश बाजार, झाँसी

(प्रयाग संगीत समिति इलाहाबाद से सम्बद्ध)

द्वारा आयोजित

## अट्ठाइसवाँ अखिल भारतीय योग एवं संगीत सम्मेलन

स्थान : पेशेलिकन हॉल (श्री लक्ष्मी व्यायाम मन्दिर) झाँसी

दिनांक : 15, 16, 17, 18 एवं 19 नवम्बर 2004

परम करुणा निकेतन विश्व वंदित युग-पुरुष स्मरणीय सद्गुरुदेव भगवान योगीराज अनंतश्री चन्द्रमोहनजी महाराज (श्री सिद्धगुफा संभाई, आगरा) की असीम कृपा से प्रभु श्री रामलाल संगीत महाविद्यालय, झाँसी द्वारा 28 वाँ योग एवं संगीत सम्मेलन उपरोक्त तिथियों में आयोजित किया जा रहा है। योग सिद्धांतों पर प्रवचन, ध्यान एवं समाधि के व्यावहारिक प्रशिक्षण हेतु आचार्य चन्द्रप्रकाश जी शर्मा (दिल्ली) सहित योग के अनेक लब्धप्रतिष्ठ विद्वान पधार रहे हैं। इस अवसर पर योगाभ्यास संकीर्तन, एकाग्रता प्रदान करने वाले भजनों के अतिरिक्त शास्त्रीय संगीत प्रतियोगितायें एवं संगीत सम्मेलन भी उपरोक्त तिथियों में आयोजित है।

सभी आदरणीय भाई, बहिन, श्रद्धालु, योग जिज्ञासु एवं धर्मप्रेमी महानुभावों से निवेदन है कि कार्यक्रम में इष्ट मित्रों सहित पधारकर पुण्य लाभ लें एवं अपने जीवन को योगमय बनायें।

### कार्यक्रम

| | | |
|---|---|---|
| 15, 16, 17, 18 एवं 19 नवम्बर 2004 | श्री प्रभुजी की आरती/संकीर्तन | प्रातः 7 से 8.30 बजे तक<br>सायं 7 से 8.30 तक |
| 15, 16, 17, 18 एवं 19 नवम्बर 2004 | योग सिद्धान्तों पर प्रवचन | प्रातः 8.30 से 10.30 बजे तक<br>रात्रि 9.00 से 10.30 बजे तक |
| 15 एवं 16 नवम्बर 2004 | प्रतियोगितात्मक संगीत प्रतियोगितायें | प्रातः 11 बजे से सायं 6 बजे |
| 17 नवम्बर 2004 | पारितोषिक वितरण | सायं 5 बजे |
| 18 एवं 19 नवम्बर 2004 | सुलेखात्मक संगीत सम्मेलन | दोपहर 2.30 से सायं 7 बजे तक |
| 19 नवम्बर 2004 | श्री प्रभुजी एवं गुरुदेव जी का पूजन | दोपहर 12 बजे |
| 19 नवम्बर 2004 | भण्डारा | दोपहर 1 बजे से 2.30 बजे तक |

मंगला आरती प्रातः 5 बजे, आसन व्यायाम नेति क्रिया प्रातः 6 बजे से 7 बजे तक

आयोजक :
डॉ. हरिमोहन गुप्ता, अध्यक्ष
इंजी. सीताराम गुप्ता, महामंत्री
एवं समस्त सदस्य कार्यकारिणी समिति
प्रभुश्री रामलाल संगीत महाविद्यालय,
एवं योग सत्संग मण्डल, झाँसी

पत्र व्यवहार :
93, निकट तहसील, झाँसी
फोन : 0517-2330074

संयोजक :
कृष्णकान्त झा, प्राचार्य
प्रभुश्री रामलाल संगीत महाविद्यालय
झाँसी

# निष्काम कर्म ही सच्चा संन्यास है

## विवेकानन्द

यह संसार कायरों के लिए नहीं है। पलायन की चेष्टा मत करो। सफलता अथवा असफलता की चिन्ता मत करो। पूर्ण निष्काम संकल्प में अपने को लय कर दो और कर्तव्य करते चलो। समझ लो कि सिद्धि पाने के लिए जन्मी बुद्धि अपने आपको दृढ़ संकल्प में लय करके सतत कर्मरत रहती है। कर्म में तुम्हारा अधिकार है, पर इतने पतित मत बनो कि फल की कामना करने लगो। अनवरत कर्म करो, पर अनुभव करो कि कर्म के पीछे भी कुछ है। सत्कर्म भी मनुष्य को महान् बन्धन में डाल सकते हैं। अतः सत्कर्मों के, अथवा नाम और यश की कामना के, बन्धनों से मत बँधो जिन्हें इस रहस्य का ज्ञान हो जाता है, वे जन्म–मृत्यु के चक्र से मुक्त हो जाते हैं, अमर हो जाते हैं।

सामान्य संन्यासी संसार त्याग देता है, बाहर निकल कर भगवान् का चिन्तन करता है। सच्चा संन्यासी तो संसार में ही रहता है, पर उसका बनकर नहीं। जो आत्म–निग्रह करते हैं, जंगल में रहते हैं और अतृप्त वासनाओं की जुगाली करते रहते हैं, वे सच्चे संन्यासी नहीं हैं। जीवन–संग्राम के मध्य डटे रहो। सुप्तावस्था में अथवा एक गुफा के भीतर तो कोई भी शान्त रह सकता है। कर्म के आवर्त और उन्मादन के बीच दृढ़ रहो और केन्द्र तक पहुँचो। और यदि तुम केन्द्र पा गये तो फिर तुम्हें कोई विचलित नहीं कर सकता।

SIDDHYOG Regd. No. L.Ag. 008 October, 2004

प्रेषण कार्यालय :

# सिद्धयोग

योग सिद्धान्तों का प्रतिपादक
उच्चकोटि का हिन्दी मासिक

श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र
सँधाई (एत्मादपुर) आगरा (उ.प्र.)

PRINTED MATTER BOOK-POST

श्री/सुश्री
191-उमाशंकर भारद्वाज
B-65 बालाजीपुरम् अलबतिया रोड़,
शाहगंज आगरा (उ0प्र0)- 282010

## यदा पश्यः पश्यते रुक्मवर्ण, कर्तारमीशं पुरुषं ब्रह्मयोनिम्। तदा विद्वान् पुण्यपापे विधूय निरंजन परमं साम्यमुपैति।।

(मुण्डकोपनिषद् ३/१/३)

*जब यह द्रष्टा जीवात्मा सबके शासक ब्रह्मा के भी आदि कारण सम्पूर्ण जगत के रचयिता दिव्य प्रकाश स्वरूप परमपुरुष को प्रत्यक्ष कर लेता है, उस समय पुण्य पाप दोनों को भलीभाँति हटाकर निर्मल हुआ वह ज्ञानी महात्मा सर्वोत्तम समता को प्राप्त कर लेता है।*

प्रकाशक एवं मुद्रक :- विनय गजानन शर्मा द्वारा कर्मयोग प्रिंटिंग प्रेस, बसईकलाँ, ताजगंज, आगरा के लिए राष्ट्रीय ब्लॉक एवं प्रिंटिंग वर्क्स, आगरा-3 से मुदित एवं श्री योग प्रशिक्षण केन्द्र, सँधाई (एत्मादपुर) आगरा से प्रकाशित।
सम्पादक- आचार्य ब्र. (डॉ.) दासलाल शर्मा